खंड 5

राज्य, समाज और धर्म

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 11 साम्प्रदायिकता*

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 साम्प्रदायिकता : अर्थ व परिभाषा

11.3 भारत में साम्प्रदायिकता में वृद्धि के कारण

11.4 साम्प्रायिक दंगे

11.5 साम्प्रदायिकता क्या है?

- 11.5.1 उपनिवेशवादियों के अनुसार
- 11.5.2 राष्ट्रवादियों के अनुसार
- 11.5.3 अन्य विद्वानों के अनुसार

11.6 भारत में साम्प्रदायिकता : सामाजिक संदर्भ

11.7 सारांश

11.8 संदर्भ

11.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

11.0 उद्देश्य

इस इकाई में आप निम्न बातों को समझने में सक्षम होंगे–

- 'साम्प्रदायिकता' तथा 'साम्प्रदायिक' शब्दों के अर्थ;
- उन सामाजिक तथा ऐतिहासिक पृष्ठभूमियों का विवरण जिनमें भारत में साम्प्रदायिकता एक गम्भीर सामाजिक समस्या के रूप में सामने आई; और
- साम्प्रदायिकता के बारे में विभिन्न विचार।

11.1 प्रस्तावना

भारत के समाजशास्त्र पाठ्यक्रम का यह पांचवां और अंतिम खंड है। इस खंड का शीर्षक है – राज्य, समाज और धर्म। इसमें भारतीय समाज तथा भारत की एकता और अखण्डता के सामने जो दो बड़ी समस्यायें खड़ी होती हैं, उन समस्याओं पर विचार किया गया है। ये समस्यायें हैं – (अ) साम्प्रदायिकता (ब) धर्म निरपेक्षता। इस इकाई में भारत में साम्प्रदायिकता पर विचार करेंगे। साम्प्रदायिक शब्द की उत्पत्ति समूह अथवा समुदाय से हुई है, जिसका अर्थ होता है व्यक्तियों का ऐसा समूह जो अपने समुदाय को विशेषरूप से महत्व देता है या अपने धर्म या नस्लीय समूह को शेष समाज से अलग हटकर पहचान देता है। एक साम्प्रदाय के दूसरे साम्प्रदाय के विरुद्ध संयुक्त विरोध को साम्प्रदायिकता कहते हैं। साम्प्रदायिकता के सामाजिक परिदृश्य को समझने के लिये समाज की प्रकृति का अध्ययन करना जरूरी है। साम्प्रदायिकता की उत्पत्ति में समाज की विशेष भूमिका होती है। यह बात उल्लेखनीय है, इतिहास गवाह है, कि भारतीय समाज कभी एक समरस समाज नहीं रहा। आरम्भ से ही इस समाज में संस्कृति, धर्म, जाति तथा भाषा आधारित विविधताएं रहीं हैं। इस विषय का

*डॉ अमिय कुमार दास, तेजपुर वि. वि/अनु. एम.पी. कंवल

अध्ययन इस पाठ्यक्रम की पहली इकाई – 'भारत में अनेकता में एकता में किया गया है। लेकिन पहले कभी विभिन्न समुदायों के बीच उग्रता और तनाव की स्थिति नहीं देखी गई थी। अधिकतर विद्वान यह मानते हैं कि साम्प्रदायिकता आधुनिक युग की देन हैं, मध्यकाल में साम्प्रदायिकता के लिये कोई जगह नहीं थी। भारत में अंग्रेजी राज्य के आरंभ के बाद ही साम्प्रदायिकता का दौर शुरू हुआ। क्योंकि अंग्रेजों की नीति 'फूट डालो राज करो' की थी। औपनिवेशक शासन में प्रतियोगिता और विभाजनकारी नीतियां काम करती हैं, राजनैतिक तथा सामाजिक संरचना में भी भेद रहते हैं, तथा धन-संपत्ति के कुछ लोगों के हाथों में चले जाने के कारण बाकी लोग आर्थिक रूप से पिछड़ जाते हैं। इस इकाई में इनमें से कुछ पक्षों पर विचार किया जायेगा।

11.2 साम्प्रदायिकताः अर्थ और परिभाषा

समुदाय और कम्यून दो अलग-अलग चीजें हैं, उन्हें एक ही संदर्भ में नहीं देखा जाना चाहिये। ऐरनकर (1999-26) तर्क देते हैं कि समुदाय और साम्प्रदायिकता दो अलग-अलग अवधारणायें हैं। समुदाय एक जैसी भावनाओं, चारित्रिक विशेषताओं, सहमतियों तथा संस्कृतियों वाले लोगों के समूह को कहा जाता है। साम्प्रदायिकता अपने समुदाय की सोच को कट्टरता के साथ पालन करने की प्रवृत्ति से जन्म लेती है, क्योंकि इसका संबंध धार्मिक समुदाय से होता है इसलिये इसका झुकाव धर्म तथा धर्म से जुड़े आयामों की ओर विशेषरूप से होता है। सेठ (2000: 17) के अनुसार, इसमें दो समुदायों के बीच शत्रुता उत्पन्न होती है, सामाजिक तनाव बढ़ता है तथा शासक व जनता के बीच आर्थिक राजनैतिक व सांस्कृतिक मतभेद उत्पन्न हो जाते हैं। साम्प्रदायिकता एक सोच है जो दो साम्प्रदायों के बीच संबंधों में धीरे-धीरे दरार डालती है। दीक्षित (1974: 1) का तर्क है कि साम्प्रदायिकता एक राजनैतिक सिद्धांत है, जो समाज में मौजूद धार्मिक एवं सांस्कृतिक मतभेदों को बढ़ावा देकर अपने राजनैतिक स्वार्थों की पूर्ति करता है। जब धार्मिक तथा सांस्कृतिक असहमतियों के आधार पर कोई समुदाय जान-बूझकर राजनैतिक मांगें उठाता है, तब साम्प्रदायिक चेतना उत्पन्न होती है, जो अंततः साम्प्रदायिकता में बदल जाती है।

सबरवाल (1996: 130) का तर्क है कि साम्प्रदायिकता एक अवधारणा के रूप में तब उभरकर आती है जब अनेक धर्मों वाले समाज में एक समुदाय के लोग दूसरे समुदाय के लोगों के साथ व्यवहार करते समय असहिष्णुता का परिचय देते हैं। अनेक धर्मों वाले समाज में हर धर्म के व्यक्तियों का अपने-अपने धर्मों को विशेष महत्व देना स्वाभाविक होता है और उसके कारण असहमतियां भी उत्पन्न होती हैं, जिनका निराकरण समझदारी से किया जा सकता है। उदाहरण के लिये अलग-अलग समुदायों में कपड़े पहनने के ढंग, जीवनशैली, भाषा, हाव-भाव तथा व्यवहार अलग-अलग होते हैं। यह अन्तर इन समुदायों के धार्मिक नियमों व मान्यताओं के कारण जन्म लेता है और इसी के आधार पर इन समुदायों की समाज में अलग-अलग पहचानें बन जाती हैं। सामाजिक व धार्मिक पहचान के प्रति सतर्कता धीरे-धीरे इसी समुदाय के लोगों में धीरे-धीरे गहरी उतरती चली जाती हैं और उसे स्वीकृति प्राप्त हो जाती है। विभिन्न समुदायों के लोग अपनी-अपनी पहचानों को अलग रखने के बावजूद दूसरों की सामुदायिक पहचान को स्वीकार करने लग जाते हैं।

सामाजिक व धार्मिक पहचानों के प्रति सतर्कता से व्यक्ति को ऐसा लगने लगता है कि उसका उस पहचान से एक खास रिश्ता है और फिर वह उस पहचान वाले सभी व्यक्तियों के साथ मिलकर एक अलग समुदाय गढ़ने की मानसिकता विकसित कर लेता है। उस समुदाय के सभी लोग एक-दूसरे के निकट आते हुए आपस में जुड़ जाते हैं और दूसरे समुदाय के व्यक्तियों के प्रति उनके दिलों में शत्रुता की भावना आ जाती हैं। फिर वे अपने

विचारों का प्रचार इस तरह करने लगते हैं कि दूसरे समुदाय के लोगों के मन में भी उनके प्रति अलगाव की भावना पैदा हो जाती है। इस प्रकार विभिन्न समुदाय आपस में एक दूसरे के विरोधी बन जाते हैं। विभिन्न धर्मों तथा संस्कृतियों को मानने वाले लोग अलग-अलग साम्प्रदाय बन कर रहे जाते हैं, ऐसी स्थिति में जब तक वे एक-दूसरे की धार्मिक भावनाओं तथा धार्मिक पहचानों को चुनौती नहीं देते तब तक तो कोई समस्या नहीं होती, परन्तु यदि वे इतने कट्टर हो जाते हैं कि वे दूसरों के धार्मिक विचारों और मान्यताओं से चिढ़ने लगते हैं तब साम्प्रदायिक दंगों की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। कामथ (2003) ने साम्प्रदायिकता की परिभाषा देने तथा उसकी व्याख्या करने का प्रयास किया है। उनका मानना है कि जहां अनेक धर्मों और जातियों के लोग रहते हों उस समाज में साम्प्रदायिक सद्भाव बनाये रखना जरूरी है। जब अनेक समुदायों के लोग एक ही देश में निवास करते हैं और उनके बीच में आपसी समझ और सहयोग की भावना बनी रहती है, तो उस स्थिति को साम्प्रदायिक सौहाद्धि कहा जाता है। इसके ठीक विपरीत जब विभिन्न पहचानों और विचारों वाले समूह देश और समाज की परवाह किये बिना एक दूसरे के विचारों का आदर नहीं करते और अपनी धार्मिक भावनाओं तथा विचारधारा को दूसरे समूह के लोगों पर थोपन का प्रयास करते हैं तो यह स्थिति साम्प्रदायिक वैमनस्यता कहलाती है, और इसी को साम्प्रदायिकता कहते हैं। इस व्याख्या से यह स्पष्ट हो जाता है कि इसी समाज में विभिन्न धार्मिक समुदायों के बीच आपसी समझ और सहयोग न होना ही साम्प्रदायिकता का आधारभूत कारण है।

11.3 भारत में साम्प्रदायिकता में वृद्धि के कारण

भारत में साम्प्रदायिकता को भड़काने वाले अनेक कारण मौजूद रहे हैं। कुछ विद्वान इसके लिये अंग्रेजी शासन की आर्थिक नीतियों को जिम्मेदार मानते हैं। ब्रिटिश शासन काल में भारत की आर्थिक दशा इतनी खराब हो गई थी कि मध्यम वर्ग के लोगों के लिये जीना मुश्किल हो गया। उस समय एक साम्प्रदाय के लोगों ने दूसरे साम्प्रदाय के लोगों की परवाह न करते हुए केवल अपने समुदाय के हित के लिये प्रयास किये, इससे दूसरे समुदायों के लोग भी साम्प्रदायिक तरीके से अपने आपको जिन्दा रखने के लिए प्रयास करने में जुट गये। फलस्वरूप, समाज साम्प्रदायिक गुटों में बंट गया। इन साम्प्रदायिक समूहों की भावना को भड़काने का काम राजनैतिक दलों ने किया और नतीजा यह हुआ कि भारत में साम्प्रदायिक तनाव की स्थिति पैदा हो गई। साम्प्रदायिकता की जड़ें इतनी मजबूत हुई कि इसी आधार पर 1905 में बंगाल का विभाजन हुआ। इसी के परिणामस्वरूप, 1909 में अलग-अलग चुनाव कराने की व्यवस्था को लेकर गवर्मेंट ऑफ इंडिया एक्ट बना। 1932 में ब्रिटिश हुकूमतों ने विभिन्न समुदायों की तुष्टिकरण का प्रयास किया और 'कम्युनल अवार्ड' कानून बनाने का फैसला लिया जिसका गांधी जी तथा अन्य नेताओं ने विरोध किया। ये सभी कानून अंग्रेजी सरकार ने मुसलमान तथा अन्य अनेक समुदायों के तुष्टिकरण के लिए बनाये थे, क्योंकि उसमें उनका अपना राजनैतिक फायदा था। तभी से भारतीय समाज में साम्प्रदायिकता की जड़ें गहरी होती गई और भारतीय समाज बंटता चला गया और भारत की मुसीबत बढ़ती चली गईं। आईए अब साम्प्रदायिकता के विभिन्न कारणों विचार किया जाय।

बॉक्स 11.0

जब 1857 में हिन्दू और मुसलमानों ने मिलकर ईस्ट इंडिया कम्पनी के शासन के खिलाफ विद्रोह किया था, तब से अंग्रेज चौकन्ने हो गये थे और उन्होंने भारत में फिर से साम्प्रदायिक सौहार्द पैदा नहीं होने दिया।

ब्रिटिश हुकूमत की 'फूट डालो और राज करो' नीति

भारत के आजाद होने से पहले देय में अंग्रेजी का राज था। अंग्रेज हिन्दु और मुसलमानों को आपस में लड़ा कर देश में राष्ट्रीय एकता का वातावरण नहीं बनने देना चाहते थे जिससे उन्हें देश को गुलाम बनाये रखने में आसानी रहे। इसीलिए वे नौकरियों के अवसर प्रदान करते तथा अन्य सेवायें देने में भी हिन्दू मुसमालों के साथ भेद-भाव का बर्ताव करते थे।

इससे ये दोनों समुदायों में आपस में टकराव उत्पन्न हुआ और इनके बीच तनाव की स्थिति रहने लगी। इसी आधार पर ऐसा माना जाता है कि हिन्दू-मुस्लिम एकता अंग्रेजी शासन के दौरान भंग हो गयी। अतः स्पष्ट है कि देश में अंग्रेजी शासन के दौरान हिन्दू-मुस्लिम साम्प्रदायिकता ने जन्म लिया।

इस मामले में प्राचीन काल तथा मध्यकाल के बीच की अवधि के इतिहासकारों में मतभेद साफ-साफ दिखाई पड़ता है। इनमें 19वीं शताब्दी के ब्रिटिश इतिहासकार जेम्समिल का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उन्होंने स्पष्ट किया है कि प्राचीन काल में भारत पर हिन्दू राजाओं का राज था, और इस काल खंड में देश बहुत संपन्न था और तेजी से विकास कर रहा था। जबकि मध्यकाल में भारत पर मुस्लिम शासनों ने राज किया और उनके शासनकाल के दौरान भारत का लगातार पतन हुआ। इससे स्पष्ट हो जाता है कि भारत में नीतियों के निर्धारित धर्म का विशेष स्थान रहा है। प्राचीन काल में भारतीय समाज और संस्कृति का उत्थान हुआ, इसके पीछे धर्म का प्रभव था। मुस्लिम शासनकाल में सांप्रदायिकता कट्टरता फली-फूली। इतिहासकारों के ऐसे उल्लेखों ने सांप्रदायिकता के विकास में भारी योगदान दिया।

राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान राष्ट्रवादी विचारधारा हिन्दू धर्म से ज्यादा प्रभावित थी। राष्ट्रवादी आंदोलनकारी पर हिन्दू धर्म का तथा इतिहासकारों का भारी प्रभाव पड़ा और उनमें मातृभूमि पर गर्व करने की भावना विशेष रूप से उभार पर आई, और मुसलमान अलग-अलग पड़ गये।

सांप्रदायिकता घृणा को और दार बनाते का काम अन्य अनेक घटकों ने भी किया, जिनमें अफवाहें, विकृत समाचार आदि प्रमुख हैं, इनसे जनता में गलत जानकारी फैली। राजनैतिक दलों के सांप्रदायिक तुष्टिकरण की सोच ने सांप्रदायिकता को और बढ़ावा दिया। अलग-अलग धार्मिक व जातीय समुदायों, सांस्कृतिक समुदायों के बीच वोट लेने के लिए राजनीति ने नौकरियों के अवसरों व सेवाओं में भी पक्षपात किया। इससे विभिन्न वर्गों के लोगों के बीच अलगाव की प्रवृत्ति बढ़ती गई।

बोध प्रश्न 1

नोटः 1) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

2) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) समाज में साम्प्रदायिक वैमनस्य पैदा होने के क्या कारण हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

2) सही और गलत कथनों के सामने क्रमशः सही और गलत लिखिए।

अ) भारत में आजादी से पहले अंग्रेजों की 'बांटो और राज करो' नीति का उद्देश्य भारत पर कब्जे किये रहना था। ( )

ब) भारत में मौजूद विविधता ने भारत में अंग्रेजों को राज नहीं करने दिया। ( )

स) 18 वीं शताब्दी के आरंभिक दौर के जेम्स मिल जैसे ब्रिटिश इतिहासकारों ने भारत में प्राचीन काल की समृद्धि को हिन्दू राजाओं के शासन से जोड़ दिया। ( )

द) भारत में साम्प्रदायिकता में वृद्धि करने का काम जिन घटकों ने किया उनमें अफवाहें तथा मीडिया द्वारा विकृत समाचारों का प्रसारण था। ( )

11.4 सांप्रदायिक दंगे

साम्प्रदायिकता के बारे में जान लेने के बाद यह जरूरी है कि साम्प्रदायिक दंगों के बारे में भी जाना जाये। सांप्रदायिक दंगे धार्मिक भावनाओं के प्रदर्शन करने तथा दूसरों की धार्मिक भावनाओं को चोट पहुँचाने के कारण होते हैं। सांप्रदायिक दंगों में एक संप्रदाय के लोग दूसरे संप्रदाय के लोगों की पहचान उनके आदर्श और आस्थाओं पर हिंसक प्रहार करते हैं। उनका उद्देश्य अपने धर्म की श्रेष्ठता दूसरे धर्मों पर हिंसक तरीके से स्थापित करने की होती है। सांप्रदायिक मतभेद प्रकट करने के दोनों तरीके होते हैं, कभी-कभी यह मतभेद छिपे तौर पर प्रकट किये जाते हैं, और कभी-कभी खुल्लमखुल्ला। जब एक संप्रदाय के लोग अपनी सांप्रदायिक विचारधारा को खुल्लमखुल्ला फैलाते हैं, तो दूसरे संप्रदाय के लोगों को यह बात बर्दाश्त नहीं हो पाती और वे उन्हें रोकने के लिये हिसंक हो जाते हैं। भारत का इतिहास साक्षी है कि भारत में अनेक बार सांप्रदायिक दंगे भड़के इनमें से कुछ अत्यधिक खतरनाक दंगों का विवरण इस प्रकार हैं:

- भारत-पाकिस्तान विभाजन (1947)
- सिख विरोधी सांप्रदायिक दंगे (1984)
- कश्मीर में हिन्दू पंडितों को कश्मीर से बाहर भगाने के लिये की गई सांप्रदायिक हिंसा और नरसंहार (1989)
- अयोध्या में बाबरी मस्जिद ढहाये जाने पर (1992) में भड़के सांप्रदायिक दंगे।
- आसाम की सांप्रदायिक हिंसा (2012)
- मुजफ्फरनगर के सांप्रदायिक दंगे (2013)

ऊपर दिये गये सांप्रदायिक दंगों में से किसी एक पर समाचार पत्रों, पत्रिकाओं अथवा पुस्तिका में प्रकाशित हुए विवरण का अध्ययन करें तथा इस दंगे के कारण क्या थे, इसका नेतृत्व किसने किया तथा इसका क्या नतीजा निकला। इन पर एक पृष्ठभूमि में अपनी रिपोर्ट तैयार करें, अब किसी दूसरे छात्र की रिपोर्ट से अपनी रिपोर्ट की तुलना करें।

11.5 सांप्रदायिकता क्या है?

इस अनुभाग में हम भारतीय संदर्भ में विभिन्न दृष्टिकोणों से सांप्रदायिकता को समझने का प्रयास करेंगे।

11.5.1 उपनिवेशवादियों के अनुसार

भारत में उपनिवेशवादी सांप्रदायिकता भारत में अंग्रेजी शासन के दौरान देखने को मिली। अंग्रेज जब भारत में आये तब यहाँ सांप्रदायिकता जैसी कोई चीज मौजूद नहीं थी। उपनिवेशवादी विचारक ह्यूज मेकफर्सन (Hugh Mcpherson) ने अपनी किताब 'ऑरजिन एण्ड ग्रोथ ऑफ क्मयुनल एंटागोनिज़्म' में इस बात से साफ इनकार किया है कि सांप्रदायिकता आधुनिक युग की खोज है या यह उस समय की राजनीति की उपज है। यद्यपि अंग्रेजों की विभिन्न संप्रदायों/समुदायों के लिए अलग-अलग चुनाव-व्यवस्था की योजना में सांप्रदायिक अलगाव को भावना निहित है।

अपने तर्क की पुष्टि में मेकफर्सन बनारस में 1809 में हुए हिन्दू मुस्लिम दंगों का उदाहरण प्रस्तुत करता है और बंगाल के भूस्वामियों का उदाहरण प्रस्तुत करता है, उसका यह मानना है कि हिन्दू और मुसलमानों के बीच कटुता सदियों पुरानी है और उसकी मुख्य वजह है भारत पर मुसलमानों का हमला करना और कब्जा करना। मैकफर्सन इस बात पर जोर देता है कि धर्म आधारित सांप्रदायिक तनाव भारत में पहले से ही मौजूद था और उसी के मद्देनजर बाल गंगाधर ने गौहत्या निरोधी संगठन (Anti Cow Killing Society) का 1893 में गठन किया था जिस का उद्देश्य हिन्दुओं में लड़ाकू बनने की भावना पैदा करना था और भारत के राजनीतिक जगत में इसके लिये स्थान बनाना था।

11.5.2 राष्ट्रवादियों के अनुसार

उपनिवेशवादियों का मानना है कि भारत में सांप्रदायिकता अंग्रेजी राज से पहले ही मौजूद थी, यह एक ऐसी समस्या है जिसका समाधान नहीं है। राष्ट्रवादियों का मानना है कि सांप्रदायिकता उपनिवेशीय शासन की देन है और इसे राष्ट्रवाद के द्वारा खत्म किया जा सकता है। इस सोच के समर्थकों के अनुसार – सांप्रदायिकता भारत में तभी फैलती है जब राष्ट्रीयता कमजोर पड़ जाती है। सांप्रदायिकता एक प्रकार की राष्ट्रीयता ही है जो धर्म का चोगा पहन कर सामने आती है। राष्ट्रवादियों के अनुसार, राष्ट्रवाद और सांप्रदायिकता उपनिवेशवादी की प्रतिक्रियाएं हैं। राष्ट्रवाद एक सकारात्मक प्रतिक्रिया है जबकि सांप्रदायिकता एक नकारात्मक प्रतिक्रिया है। राष्ट्रवाद हिन्दू और मुसलमानों के बीच सहयोग की एक एकता मूलक तथा सहजीवी संस्कृति थी, जिसे अंग्रेजी शासन काल में बांटो और राज करो की नीति द्वारा नष्ट कर दिया गया। निश्चित रूप से इसके लिये ब्रिटिश हुकूमत द्वारा भारत पर थोपा हुआ उपनिवेशवाद है।

11.5.2 अन्य विद्वानों के अनुसार

सांप्रदायिकता पर अपने विचार प्रकट करने वाले विद्वानों में प्रमुख विपिन चन्द्रा ने 1984 में –'कम्युनलिज्म इन मॉडर्न इण्डिया' नामक एक किताब लिखी थी, इस किताब में उन्होंने इस बात का खुलासा किया है कि भारत में सांप्रदायिकता फैलाने के लिये कौन जिम्मेदार है। बिपिन चन्द्रा तथा अन्य राष्ट्रवादी इतिहासकारों का यह मानना है कि सांप्रदायिकता आधुनिक युग की देन है और भारत में अंग्रेजी शासन से पहले इसका कोई अस्तित्व नहीं था, क्योंकि अंग्रेजों के भारत में आने से पहले इस देश में लोक लुभावन राजनीति का अस्तित्व ही नहीं था। अंग्रेजों ने इस तरह की राजनीति को जन्म दिया। चंद्रा का यह विचार ठीक ही है कि भारत में उपनिवेशवादी शासन ने सांप्रदायिकता की राजनीति की।

बिपिन चंद्रा के शब्दों में – ''सांप्रदायिकता सामाजिक वास्तविकता का आंशिक अथवा अलगाववादी विचार नहीं था। सांप्रदायिकतावादियों का दृष्टिकोण गलत था अथवा यह कह

सकते हैं कि वह तर्कसम्मत नहीं था। सांप्रदायिकता संकीर्ण सोच नहीं मानी गई होती, यदि सांप्रदायिकतावादियों ने अपने पूरे समुदाय का प्रतिनिधित्व किया होता, सच तो यह है कि इन लोगों के किसी समुदाय का ठीक से प्रतिनिधित्व नहीं किया। सांप्रदायिकतावादियों ने राष्ट्रीय भावना का प्रदर्शन नहीं किया, उन्होंने अपने पूरे समुदाय की रुचियों का भी प्रतिनिधित्व नहीं किया और झूठ-मूठ यह दावा किया कि वे अपने समुदाय का प्रतिनिधित्व करते हैं'' (चन्द्रा, 1984:17)।

इस प्रकार राष्ट्रवादियों ने उपनिवेशवादी शासन से मुक्ति प्राप्त करने तथा एक स्वतंत्र राष्ट्र निर्माण करने के लिये संघर्ष का प्रतिनिधित्व किया। ऐतिहासिक रूप से यह महत्वपूर्ण कदम था, क्योंकि इससे वास्तविक समस्या का वास्तविक समाधान निकला। उपनिवेशवादी शासन से भारत को आजादी मिली (चन्द्रा, 1984: 22)।

उपनिवेशवादी तथा राष्ट्रवादी सांप्रदायिकता की व्याख्या जिस तरह करते हैं, आधुनिक विचारक उन्हें कोई महत्व नहीं देते। अधिकतर समकालीन विचारक सांप्रदायिकता को रचनात्मकतावादी दृष्टि से देखते हैं, इनमें प्रमुख विचाक बर्नार्ड कोहन हैं। बर्नार्ड कोहन के रचनात्मकतावाद की अनेक शाखायें विकसित हुई हैं, जबकि कोहन का मुख्य तर्क यह है कि भारत में उपनिवेशवादी शासन ने सामाजिक वर्गों की अवधारणा उत्पन्न की जैसे कि अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजातियां आदि। इन जातियों के लोग संतुष्ट नहीं थे वे बहुत परेशान रहते थे और इसीलिये वे संघर्ष का आधार बने। कोहन के सहयोगी तथा अनुयायी ने इस बात के समर्थन में अनेक कारण बताये हैं। उनके अनुसार भारत में सांप्रदायिकता के लिये केवल उपनिवेशवादी शासन जिम्मेदार नहीं था। उपनिवेशवादी शासकों ने भारतीय समाज के उत्थान के लिये अनेक महत्वपूर्ण फैसले लिये। उन्होंने प्रशासनिक तकनीकों द्वारा समाज के विभिन्न वर्गों के लिये लाभकारी नीतियों का निर्माण किया, परन्तु उन्हें एक पहचान दिलवाई उनमें जागृति की भावना पैदा की और राष्ट्रीयता की भावना पैदा की (पांडे, 1992) के लेखन में यह दृष्टि प्रतिविम्बित होती हैं। पांडे सांप्रदायिकता को राष्ट्रवाद की उपज मानते हैं। यर्थात वे यह तर्क भी देते हैं कि सांप्रदायिकता राष्ट्रवाद को संपूर्णता के साथ स्वीकार नहीं करता बल्कि यह अधकचरे राष्ट्रवाद द्वारा संचालित है।

आधुनिकतावादियों के विरोधी

पिछले अनुभाग में सांप्रदायिकता की गुट विरोधी विचाराधारा धर्मनिरपेक्षता पर विचार किया गया था। अपनी किताब 'द पॉलिटिक्स ऑफ सैकुलरिज्म एण्ड द रिकवरी ऑफ रिलीजियस टॉलरेंस' में 'नन्दी' ने इस बात पर जोर दिया है कि मनुष्य को धर्मनिरपेक्ष दृष्टि की जरूरत क्यों है तथा आधुनिक विचारकों को धर्मनिरपेक्षता की सोच पर जोर देना क्यों जरूरी है। 'नन्दी' का मानना यह है कि भारत में उपनिवेशवाद की समाप्ति के बाद जो नई सरकार बनी उसने तीसरी दुनिया का प्रतिनिधित्व किया। साम्राज्यवाद से आजाद हुए ज्यादातर देशों को धर्म निरपेक्षता की सोच ठीक लगी। तीसरी दुनिया के देशों ने धर्म निरपेक्षता के वैचारिक क्षेत्र का नेतृत्व इतने प्रभावशाली ढंग से किया कि वास्तविक क्षेत्र हमारे ध्यान से अलग हो गया और धर्म निरपेक्षता के नये विचार ने उसका स्थान ले लिया।

नन्दी का इरादा धार्मिक सहिष्णुता के क्षेत्र को दुनिया के सामने रखने का है, क्योंकि दक्षिण एशिया में जहां अनेक धर्मों के लोग एक साथ रहते हैं वहां धर्म निरपेक्षता के विचार की प्रधानता विशेष महत्व रखती है। नन्दी मानता है कि पारम्परिक भारत की सोच धार्मिक सहिष्णुता की रही है जो शायद आधुनिक युग में उन लोगों के लिये आत्मसात करना मुश्किल है जो अब भी धार्मिक कट्टरता में विश्वास रखते हैं। इस सब के बावजूद धर्म निरपेक्ष दृष्टि का आधुनिक युग में होना न केवल महत्वपूर्ण है, परन्तु व्यर्थ के झमेलों में पड़ने से बचने और एक सफल जीवन जीने के लिये जरूरी भी है।

नन्दी ने अपने धर्म निरपेक्षता के विचार की परम्परा और आधुनिकता, आस्था और विचारधारा के संदर्भ में प्रस्तुत किया है। नन्दी यह इशारा करता है कि उपनिवेशवादी ने साम्राज्यवाद के विस्तार पर जोर देने के कारण भारतीय समाज में पारम्परिक रूप से पीढ़ी-दर पीढ़ी चली आ रही धार्मिक सहिष्णुता को चोट पहुंचाई। इसका नतीजा यह हुआ कि इस देश के लोग अपनी पारम्परिक सहिष्णुतावादी सोच को भूल गये। इस प्रकार नन्दी ने धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा को भलीभांति स्थापित किया है, यद्यपि वो इस बात का जबाव नहीं देता कि उसने धर्म निरपेक्षता को धार्मिक सहिष्णुता से क्यों जोड़ा है। भारत में जो धार्मिक असहिष्णुता आज दिखाई पड़ रही है क्या, धर्म निरपेक्षता ही उसका सही विकल्प है तथा भारतीय संदर्भ में सांप्रदायिकता की व्याख्या किस प्रकार की जा सकती है। क्या सांप्रदायिकता एक धार्मिक समस्या है?

नन्दी को भारतीय राजनीति में धर्मनिरपेक्षता का विचार दिखाई देता है लेकिन वह इस बात से इन्कार करता है कि इस विचार का उपनिवेशीय भारत से कोई संबंध है। धर्म निरपेक्षता को मैं आधुनिक भारत के लिये जरूरी मान रहा हूँ वह धार्मिक टकरावों में होने वाली हिंसा का विकल्प नहीं था। बल्कि यह भारत में प्रतिनिधित्व की राजनीति द्वारा दिया गया एक सही जवाब था। कांग्रेस ने स्वयं को धर्म निरपेक्ष राजनीतिक दल के रूप में प्रस्तुत किया और उसे सभी भारतीयों के लिये महत्वपूर्ण माना, जबकि अन्य राजनीतिक दलों ने विभिन्न राजनीतिक समुदायों का प्रतिनिधित्व किया। उनकी सोच में धर्मनिरपेक्षता नहीं लिखी। इस प्रकार नन्दी का विचार बिल्कुल स्पष्ट है कि भारत में पारम्परिक समाज में पूरी तरह शान्ति थी समाज में विभिन्न धर्मों के लोग मिलकर रहते थे, और यह शान्ति इसलिये बनी हुई थी कि लोग एक दूसरे के धर्म का आदर करते थे। यही वो धार्मिक सहिष्णुता है जिस पर नन्दी जोर देता है, इसके बावजूद किसी को भी यह पूछने का हक है कि सहनशीलता का धर्म से संबंध कितना वाजिब है।

11.6 भारत में सांप्रदायिकताः सामाजिक संदर्भ

भारत में हिन्दू एक बहु-संख्यक समुदाय है यह अवधारणा उपनिवेशिक काल में उभरकर सामने आई। 1800 ई. में राजनैतिक वर्चस्व स्थापित करने के लिए इतिहास तैयार कराने की प्रवृत्ति शासकों में तेजी से उभरी। औपनिवेशिक काल में अंग्रेजों के शासन में भारत के हिन्दुओं में एक नयी चेतना का उदय हुआ, क्योंकि मुस्लिम शासकों से सत्ता छीनकर अंग्रेजों ने मुस्लिम समुदाय के वर्चस्व को चुनौती दे दी थी। ब्रिटिश शासनकाल में हिन्दुओं में जागा आत्मविश्वास और उपजी एकता की भावना आधुनिक युग के हिन्दू एकता का आधार है। उसी के आधार पर हिन्दुओं में राष्ट्रीयता की भावना ने आकार ग्रहण किया है, जो आज इतना मजबूत हो गया है जो दूसरे संप्रदायों को खटकने लगा है और इस समय अनेक धार्मिक तथा गैर धार्मिक आंदोलन उठ खड़े हुए हैं जो हिन्दू बहुल समाज का अपना राष्ट्र देखना चाहते हैं।

जब भारत में अंग्रेजों का राज था तो राष्ट्रीयता की भावना का जन्म लेना स्वाभाविक ही था, क्योंकि भारत के लोग अंग्रेजी शासन से मुक्ति चाहते थे। इसी उद्देश्य से भारत के उन ऐतिहासिक घटनाक्रमों को बढ़ा-चढ़ाकर राष्ट्र के सामने रखा गया जब राजपूत राज्यों ने तथा मराठाओं ने अंग्रेजों को भारत पर आधिपत्य जमाने से रोकने के लिये संघर्ष किया था। धीरे-धीरे हिन्दू वर्चस्व और हिन्दू संचेतना के गर्भ से हिन्दू राष्ट्र की अवधारणा ने जन्म लिया जिसे विभिन्न कारणों से सांप्रदायिकता का रूप दे दिया गया। एक ही समुदाय के लोगों के द्वारा व्यक्त की गई राष्ट्रीय चेतना का बाल गंगाधर तिलक जैसे कांग्रेसी नेताओं ने समर्थन किया। उन्होंने हिन्दू त्यौहारों को तथा सार्वजनिक महत्व के अवसरों को जैसे गणेश चतुर्थी

को धूमधाम से मनाने की परंपरा डाली। हिन्दुओं के यह त्यौहार मुसलमानों के मुहर्रम जैसे त्यौहारों से प्रतिस्पर्धा करते हुए मनाये जाने लगे। 19वीं शताब्दी के अंतिम वर्षों में हिन्दू आयोजनों को आर्य समाज जैसे सुधारवादी संगठनों ने भी महत्व देना शुरू कर दिया। आर्य समाज का नारा था कि वेदों की ओर चलो और क्योंकि अंग्रेज और उनका भारत में शासन वैदिक विचारधारा का विरोधी था अंतः आर्य समाजियों ने अपनी विचारधारा के लोगों को ब्रिटिश शासन को भारत से उखाड़ फेंकने के लिये शक्ति के रूप में इस्तेमाल किया।

19वीं शताब्दी में ही यूरोपीय इतिहासकारों ने बढ़ा-चढ़ाकर इस बात को लिखा कि भारत आर्यों की धरती है। आंदोलनकारी तथा क्रांन्तिकारी हिन्दू नेताओं ने अंग्रेजों की इस ऐतिहासिक धारणा को अंग्रेजी शासन पर प्रहार करने के लिये हथियार के रूप में इस्तेमाल किया।

20वीं शताब्दी के दूसरे शतक में महान क्रांन्तिकारी वीर सावरकर तथा उनके अनुयायियों ने इस धारणा का प्रतिनिधित्व किया और यह घोषणा कर डाली कि केवल आर्य ही भारत के मूल निवासी हैं और वे मिलकर हिन्दू राष्ट्र की स्थापना करेंगे, जो हिन्दू धर्म को नहीं मानते उनके लिये हिन्दू राष्ट्र में कोई स्थान नहीं होगा। इस प्रकार भारत में हिन्दुओं की एकता को मजबूत करने और पारम्परिक धार्मिक विविधता को चुनौती देने की प्रवृत्ति ने जोर पकड़ा और एक राष्ट्र के अन्दर एक दूसरा राष्ट्र बनाने की धारणा बलवती होती गई। जिस समय देश आजाद हुआ उस समय इसी धारणा के विरोध में मुसलमालों में उग्र हुई सांप्रदायिकता ने देश को बंटवारे पर विवश किया।

15 अगस्त, 1947 ने जब भारत के प्रथम प्रधानमंत्री के रूप में कांग्रेस के वरिष्ठ नेता जवाहरलाल नेहरू ने शपथ ग्रहण की तो उन्हें भारतीय समाज के सांप्रदायिक विभाजन की बड़ी चिन्ता थी, इसी लिये उन्होंने सांप्रदायिकता की प्रवृत्ति को कमजोर बनाने तथा भारत राष्ट्र को मजबूती प्रदान करने के उद्देश्य से धर्म निरपेक्ष नीति की घोषणा की। प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू को यह बात सहन नहीं थी कि औपनिवेशिक काल में उत्पन्न हुई धार्मिक पहचान की राजनीति आजादी के बाद भी देश में दोहराई जाती रहे। वे धर्म को राजनीति से अलग करना चाहते थे। धार्मिक पहचान को वे देश की एकता के लिये एक बड़ा खतरा मानते थे और इस बात पर गर्व करना चाहते थे कि जिस भारत देश के वे मुखिया हैं उसमें विभिन्न धर्मों और जातियों के लोग बिना किसी भेदभाव के भारत के नागरिक के रूप में मिलकर रहते हैं। बहुसांस्कृतिक तथा बहुधार्मिक समाज में राष्ट्र के रूप में एकता की धारणा को स्थापित करने का सपना देखते हुए जवाहरलाल नेहरु ने धर्म निरपेक्ष भारत के निर्माण के लिये महत्वपूर्ण कदम उठाया था। इस प्रकार जवाहरलाल नेहरू की धर्म निरपेक्ष नीतियों तथा महात्मा गांधी की अहिंसा तथा प्रेम जैसी महान मानवतावादी सोच की छत्रछाया में कांग्रेस पार्टी ने आजाद भारत का नेतृत्व किया था। एक ऐसे भारत का नेतृत्व जिसके लोगों में परस्पर सांप्रदायिक सद्भाव तथा धार्मिक सहिष्णुता विद्यमान थी।

बोध प्रश्न 1

नोटः 1) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

2) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) औपनिवेशिक काल के सांप्रदायिक मॉडल और आधुनिक राष्ट्रीय मॉडल में क्या अंतर है।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) रिक्त स्थान भरिये–

अ) प्रसिद्ध विचारक ..... ने 1984 में सांप्रदायिकता पर कम्युनलिज्म इन मॉडर्न इण्डिया नामक किताब लिखी जिस में उसने सांप्रदायिकता को एक ..... अवधारणा कहा है।

ब) अंग्रेजी शासन काल में राष्ट्रीयता की भावना को ..... प्रदान करना जरूरी था, क्योंकि भारत के लोग ..... को भारत से भगाना चाहते थे।

नेहरू ने जिस पारम्परिक धर्म निरपेक्षता की घोषणा की थी, वो सुधारवादी और न्यायवादी धर्म मुक्त सोच थी, परन्तु हिन्दु बहुलतावादी लोगों ने उसे सांप्रदायिकता तथा छद्म धर्मनिरपेक्षता कहकर नेहरू की आलोचना की। कांग्रेस के बाद आने वाले उन राजनीतिक दलों ने जो धार्मिक और सांप्रदायिक सोचकर समर्थन करती थीं, उन्होंने धर्मनिरपेक्षता की अपनी अवधारणा को महत्व दिया, जो हिन्दू बहुलवाद पर आधारित थी। इन राजनीतिक दलों ने हिन्दुत्व को महत्व दिया तथा राजनीति में हिन्दुओं के वर्चस्व को स्वीकार करते हुए और अल्पसंख्यकों की अवहेलना करते हुए बहुसंख्यकों की राजनीति की।

यद्यपि यह केवल हिन्दू बहुलतावादी लोग ही नहीं थे, जिन्होंने आजादी के बाद भारतीय राजनीति में लागू की गयी धर्म निरपेक्षता की आलोचना की, अनेक बुद्धिजीवियों ने भी जिस आधार पर भारत का संविधान बनाया गया। उसकी आलोचना की क्योंकि उनके अनुसार यह तथा कथित धर्म निरपेक्षता भारत की आवश्यकताओं के अनुकूलन नहीं थी। नेहरू जी की धर्म निरपेक्षता की आलोचना करने वालों में जो विचारक आगे आये उनमें आशीश नन्दी, पार्थ चटर्जी, जे.एन. मदान तथा ज्ञानेन्द्र पाण्डे का नाम प्रमुख रूप से शामिल है। यह सभी विद्वान हिन्दुत्ववादी सोच के भी समर्थक नहीं हैं, इनकी दृष्टि में नेहरू की धर्म निरपेक्षता और दक्षिणपंथी पार्टियों की हिन्दुत्व की अवधारणा दोनों ही राष्ट्रीय अखण्डता, मानवीय संदर्भ और लोकतंत्र विरोधी है। उनका तर्क है कि हिन्दुत्ववादी सोच और धर्म निरपेक्षतावादी राष्ट्रीयता की सोच दोनों ही भारतीय समाज की विविधता को आत्मसात् नहीं कर पातीं। गांधी की गांवों को मजबूत बनाने की योजना और गांवों में रामराज्य लाने की योजना कहीं पीछे छूट गई। गांव के लोग गणतांत्रिक भावना का पूरी तरह आत्मसात भी नहीं कर पाये और वे स्थानीय तथा बंटे-बंटे से रह गये। इन्हीं नीतियों के चलते 1980 में उत्तर भारत में खालिस्तान समर्थक आंदोलन हुआ जिसमें पंजाब में हिंसा का तांडव नृत्य हुआ और कश्मीर समस्या को लेकर भारत को आंतकवाद का सामना करना पड़ रहा है।

यद्यपि इन विचारकों की बात में दम है लेकिन फिर भी इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि धर्म निरपेक्षता देश के नागरिकों को समानता का अवसर देती है, वो सब को एक नजर से देखने का काम करती है और लोकतंत्र के लिये धर्मनिरपेक्षता का अपना विशेष महत्व है।

हमें यह समझ लेना जरूरी है कि आधुनिक सांप्रदायिकता अथवा बहुसंख्यावाद का सिद्धांत की जड़ें ऐतिहासिक अतीत में हैं। इसलिए सांप्रदायिकता को समझने के लिए प्राचीन तथा

मध्यकालीन इतिहास की तहों में अवश्य झांके। हिन्दू सांप्रदायिकता का उद्देश्य एक आदर्श हिन्दू समाज की स्थापना करना है तथा मुस्लिम सांप्रदायिकता का उद्देश्य इस्लाम के अनुकूल मुस्लिम समाज की स्थापना करना है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि ऐतिहासिक व्याख्या अपने समय की विचारधारा या सोच की उपज हो सकती है। जिन घटनाओं का इतिहासकार वर्णन करता है वे उसकी अपनी पसंद की हो सकती हैं। इस प्रकार इतिहास-लेखन अतीत की एक ऐसी व्याख्या होती है, जो लक्ष्य से भटकी हुई हो सकती है।

इतिहास लेखन अत्यधिक संवेदनशील कार्य है। इतिहासकार अपने समय के विश्वासों, मान्यताओं और राष्ट्र के बारे में धारणाओं के प्रभाव से अछूता नहीं रह सकता। भारतीय इतिहास में अनेक ऐसे उदाहरण पाये जाते हैं, तथा इस इतिहास के बारे में ऐसे अनुमान भी लगाये जाते हैं जो साम्प्रदायिक नहीं भी हो सकते हैं, परन्तु उनके लक्षणों और प्रभावों के आधार पर यह अवश्य कहा जा सकता है कि वे सांप्रदायिकता के सांचे में सही बैठ सकते हैं, उदाहरण के लिये महमूद गजनी मुसलमान था। उसके बारे में यह कल्पना की जा सकती है कि उसने हिन्दू मन्दिरों का विध्वंस किया होगा। क्योंकि इस्लाम धर्म मूर्ति पूजा का विरोधी है। मुसलमान होने के नाते महमूद गजनी के बारे में हिन्दू समाज में इस तरह की धारणा का उत्पन्न होना स्वाभाविक है।

इस प्रकार की धारणा को सांप्रदायिक धारणा कहा जाता है और दो कारणों से यह धारणा खतरनाक है। पहला यह है कि सांप्रदायिक व्याख्या करने वाला इतिहास औछे किस्म का इतिहास माना जाता है उसकी गुणवत्ता और विश्वसनीयता निम्न स्तर की होती है, दूसरा यह है कि ऐसा करते समय इतिहासकार अपने आपको एक अनुशासन में बांधकर नहीं रख पाता और उसका नतीजा यह होता है कि इतिहास की अस्मिता नष्ट हो जाती है और उसमें असत्य शामिल हो जाता है और उसका इस्तेमाल राजनैतिक लाभ के लिये किया जा सकता है। ये कुछ ऐसे कारण हैं, जिन्हें ध्यान में रखते हुए भारत के अतीत की वास्तविकता को समझने का प्रयास किया जाना चाहिये।

आजकल सांप्रदायिक हिंसा पूरी दूनिया में एक सामान्य बात हो गई है। सांप्रदायिक हिंसा को अनेक देशों में अनेक नाम दिये जाते हैं जैसे - चीन के सिंज्यांग प्रांत में हुई सांप्रदायिक हिंसा को नस्लीय हिंसा कहा जाता है। सांप्रदायिक हिंसा और दंगों को बाहरी लोगों की घुसपैठ का नतीजा ही बताया जाता है या फिर नागरिकों के बीच हुआ उग्र टकराव अथवा अल्पसंख्यक असंतोष, व्यापक जातीय हिंसा, सामाजिक अथवा साम्प्रदायिक हिंसा तथा नस्लीय व धार्मिक हिंसा आदि कहा जाता है।

भारतीय समाज को जातीय तथा सांप्रदायिक टकरावों से तब तक मुक्ति मिलने वाली नहीं है जब तक कि इस देश में जातियों और समुदायों का विभाजन खत्म नहीं हो जाता और राजनैतिक तथा आर्थिक समानता का लक्ष्य प्राप्त कर लिया नहीं जाता। एक ओर भारत को पिछड़ी हुई जनसंख्या की बहुलता की मार झेलनी पड़ रही है और दूसरी ओर देश की अर्थव्यवस्था पर वैश्विक प्रभाव झेलने पड़ रहे हैं ऐसी स्थिति में भारतीय समाज में समय-समय पर हिंसक टकराव तो होते ही रहेंगे। जब तक भारत के समाज समतावादी समाज नहीं बन जायेगा तब तक जातीय और सांप्रदायिक ध्रुवीकरण की प्रक्रिया जारी रहेगी।

11.7 सारांश

इस इकाई में हमने सांप्रदायिकता की व्याख्या की उसका अर्थ और उसकी परिभाषा समझाई। सांप्रदायिकता के आधार पर भूत कारणों का वर्णन किया, भारत जैसे धर्म बहुल समाज में बार-बार सामाजिक समरसता क्यों भंग होती है और सांप्रदायिक तनाव की स्थित

क्यों आ जाती है, इससे जुड़े विभिन्न पहलुओं और घटकों का वर्णन किया, इस इकाई में हमने यह भी बताया कि भारत में सांप्रदायिक भावना उत्पन्न करने के लिये क्या-क्या कारक जिम्मेदार नहीं हैं। भारत के अतीत के इतिहास का वर्णन भी प्रस्तुत किया और यह भी बताया कि भारत में सांप्रदायिकता तीन चरणों में विकसित हुई, इसके साथ-साथ यह भी बताया गया कि किन-किन विद्वानों तथा समाज विशेषज्ञों ने भारत में सांप्रदायिकता पर अपने विचार व्यक्त किये हैं।

11.8 संदर्भ

'आल्टरनेटिव इंडियाज़ राइटिंग, नेशन एण्ड कम्युनलिज्म' – अलैक्स रोडोपी (2005) मोरे, पीटर एण्ड टिकैल।

'कम्युनलिज्म एण्ड राइटिंग ऑफ इण्डियन हिस्ट्री - विपिन थापर, रोमिलैंन्ड चन्द्रा (1984) पीपल्स पब्लिशिंग हाउस।

कम्युनलिज्म, कास्ट एण्ड हिन्दू नेशनेलिज्म, दवायलैंस इन गुजरात - ऑरनिट, शानी (2007) कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रैस।

कम्युनलिज्म, इन मॉडर्न इण्डिया - विपिन चन्द्रा (1984) विकास पब्लिकेशन्स दिल्ली।

कम्युनलिज्म, ए स्ट्रगल फॉर पॉवर - प्रभा दीक्षित (1974) ओरियेन्ट लॉग मैन, नई दिल्ली।

सैक्युलरिज्म एज एन एन्टीडोट टू कम्युनलिज्मः इन्टर नेशनल परक्यू साइट फॉर इट्स सक्सैस, इण्डिया क्वाटरली ए जनरल ऑफ इंटरनेशनल अफेयर्स वॉल्यूम I. VI. No. 3:4 - एम. पी कामत (2003)।

कम्युनलिज्म एज वायलैंस : हिन्दू पॉलिटिक्स इन इण्डिया टुडे, इण्डियन ओसिन फॉर पीस स्टडीज - ज्ञानेन्द्रा पाण्डेय (1992) यूनिवर्सिटी ऑफ वैस्टर्न ऑस्ट्रिया।

रूट्स ऑफ क्राइसेज इन्टर प्रैटिंग कन्टैम्पोररी इण्डियन सोसायटी, - सतीश सबरवाल सेज पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।

कम्युनलिज्म ए सोश्यो पॉलिटिकल स्टडी (1947) सतीश सेठ (2000) ज्ञान पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली।

फन्डा मैन्टलिज्म एण्ड कम्युनलिज्म इन इण्डिया, थर्ड कन्सैप्ट, अप्रैल, 1999 - श्री रामयेरेन्कर (1999)

11.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) आपके उत्तर में निम्न को शामिल होना चाहिएः

   जब विभिन्न सामाजिक व धार्मिक नस्लों के लोग किसी एक देश में एक साथ रहते हैं तो वे एक दूसरे से अपनी पहचान स्वार्थ तथा राष्ट्रीय अभिरुचि अथवा अपनी जीवन शैली को दूसरों पर लादने के लिये आपस में टकराते रहते हैं। इससे सांप्रदायिक विषमता उत्पन्न हो जाती है और हिंसा फैल जाती है इस स्थिति को सांप्रदायिकता कहा जाता है।

2) अ) सही

ब) गलत

स) सही

द) सही

बोध प्रश्न 2

1) आपके उत्तर में निम्न को शामिल होना चाहिएः

उपनिवेशवादियों का विश्वास था कि भारत में सांप्रदायिकता की जड़ें उपनिवेश काल से भी पहले मौजूद थीं और सांप्रदायिकता को भारत में कभी समाप्त नहीं किया जा सकता। इसके विपरीत राष्ट्रवादियों का यह विचार है कि सांप्रदायिकता को राष्ट्रीयता उत्पन्न करके समाप्त किया जा सकता है। वे यह मानते हैं कि भारत में कुछ लोगों ने राष्ट्रीयता का रास्ता छोड़कर धार्मिकता का रास्ता अपनाया। इसीलिये भारत में सांप्रदायिकता की भावना पैदा हुई। सांप्रदायिकता के भारत में आने का कारण केवल औपनिवेशिक शासन नहीं है। भारतीय सांप्रदायिकता को राष्ट्रीयता में बदला जा सकता है।

2) अ) बिपिन चन्द्रा, आधुनिक

ब) पुनर्विचार, अंग्रेजी/अंग्रेज

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 12 धर्मनिरपेक्षता*

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 धर्मनिरपेक्षता तथा धर्मनिरपेक्षीकरण

- 12.2.1 धर्मनिरपेक्षीकरण शब्द
- 12.2.2 धर्मनिरपेक्षता शब्द का समाजशास्त्रीय अर्थ
- 12.2.3 धर्म के भीतर धर्मनिरपेक्षीकरण
- 12.2.4 मूल्य के रूप में धर्मनिरपेक्षता

12.3 धर्मनिरपेक्षीकरण की प्रक्रिया

- 12.3.1 धर्म व धर्मनिरपेक्ष शक्तियों के बीच का संघर्ष
- 12.3.2 चर्च तथा राज्य

12.4 धर्म निरपेक्षीकरण की प्रक्रिया का सामाजिक संदर्भ

- 12.4.1 नवजागरण काल
- 12.4.2 विज्ञान की उन्नति
- 12.4.3 व्यापार व वाणिज्य का विकास
- 12.4.4 सुधारीकरण

12.5 समकालीन जगत में धर्मनिरपेक्षता

12.6 भारत में धर्मनिरपेक्षता

- 12.6.1 भारत और धर्मनिरपेक्षता
- 12.6.2 भारत में धर्मनिरपेक्षता का अर्थ
- 12.6.3 धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा तथा आदर्शवाद

12.7 भारत में धर्मनिरपेक्षता

12.8 सारांश

12.9 संदर्भ

12.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

12.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप समझने में सक्षम होंगे–

- धर्मनिरपेक्षता व धर्मनिरपेक्षीकरण जैसे शब्दों का अर्थ;
- उसकी समाजिक व ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की चर्चा करने में जिसमें धर्मनिरपेक्षीकरण सामाजिक रचना के रूप में उभरा;
- धर्म निरपेक्षता की ऐसी विशिष्ट प्रकृति का विश्लेषण, जिसे भारत में अपनाया गया है; और
- भारत में धर्मनिरपेक्षता के चलन में आने वाली समस्याओं तथा कठिनाइयों को समझ सकें।

* ESO-15 समाज और धर्म, खंड 3, इकाई 16, अर्चना सिंह से अनुकूलित

12.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में हमने भारत में सम्प्रदायिकता के अलग-अलग पहलुओं को समझा। इस इकाई में हम धर्मनिरपेक्षीकरण की सामाजिक प्रक्रिया को तथा धर्मनिरपेक्ष शब्द को समझने का प्रयास करेगे, जो इस प्रक्रिया से उभरा है।

पहले अनुभाग में हम आपका परिचय धर्मनिरपेक्ष तथा धर्मनिरपेक्षीकरण के अर्थ से कराएंगे। यह समझने के लिए यह शब्द प्रचलन में कैसे आए, हम आपको इन प्रक्रियाओं की ऐतिहासिक व सामाजिक पृष्ठभूमि में ले जाना चाहेंगे। अगले अनुभाग में हम समकांलीन समाज में धर्मनिरपेक्षीकरण की प्रकृति के बारे में भी बताएंगे। अंत में, हम भारत में धर्मनिरपेक्षता की प्रकृति की भी चर्चा करेंगे। इन विशिष्टताओं तथा संबंधित कठिनाइयों के बारे में समझने के लिए हम आपको धर्मनिरपेक्षता के व्यवहारीकरण में विभिन्न ऐतिहासिक तथा समकालीन संक्रियाओं से भी अवगत कराएंगे।

12.2 धर्मनिरपेक्षता तथा धर्मनिरपेक्षीकरण

आपके सामने धर्मनिरपेक्षता तथा धर्मनिरपेक्षीकरण शब्द अनेक बार आए होंगे। निश्चित ही आप में इनका अर्थ जानने की इच्छा जागृत हुई होगी।

धर्मनिरपेक्षीकरण तथा धर्मनिरपेक्षता शब्दों की कोई निश्चित परिभाषा नहीं है। विभिन्न परिस्थितियों तथा परिदृश्यों के आधार पर इनके अर्थ भी भिन्न हो जाते है। हम इनमें से कुछ अर्थों को जानने का प्रयास करेंगे।

सर्वप्रथम हम यह समझने का प्रयास करेंगे कि धर्मनिरपेक्षीकरण वास्तव में क्या है तत्पश्चात् हम धर्मनिरपेक्षता की ओर बढ़ेंगे जो धर्मनिरपेक्षीकरण की प्रक्रिया का परिणाम है।

12.2.1 धर्मनिरपेक्षीकरण शब्द

धर्मनिरपेक्ष शब्द की उत्पति लेटिन भाषा के शब्द 'सेक्यूलर' से हुई है, जिसका अर्थ है– 'वर्तमान युग अथवा पीढ़ी'। धर्मनिरपेक्ष शब्द धर्म धर्मनिरपेक्षीकरण की सामाजिक प्रक्रिया से जुड़ा है।

धर्मनिरपेक्षता को यूरोप में व्यवहार में लाया गया, वहां इसका उपयोग कुछ क्षेत्रों को चर्च के अधिकार से निकाल कर राज्य अथवा धर्मनिरपेक्ष संस्था के प्रभाव के अधीन हस्तांतरित करने के लिए किया गया।

ईसाई विचारधारा के अंतर्गत पहले से ही 'धार्मिक' तथा 'धर्मान्तर' का अंतर मौजूद था। (धार्मिक अर्थात वह सब जो पारलौकिक है तथा 'धर्मान्तर' अर्थात जो सांसारिक है) इस विचार को धर्म की उच्चता को स्थापित करने के लिए आगे बढ़ाया गया।

तथापि इस शब्द का प्रयोग धर्मनिरपेक्षीकरण के विचार द्वारा अधिक व्यावहारिक व सामाजिक रूख अपनाने पर अलग प्रकार से किया गया।

12.2.2 धर्मनिरपेक्षीकरण शब्द का समाजशास्त्रीय अर्थ

समाजिक विचारकों ने धर्मनिरपेक्षीकरण शब्द का प्रयोग उस प्रक्रिया के लिए किया है जहां धार्मिक संस्थान तथा धार्मिक विचारधाराओं तथा समझ का नियंत्रण सांसारिक मामलों और आर्थिक, राजनीति, विधि-न्याय, स्वास्थ्य, परिवार, इत्यादि पर से समाप्त हो गया। इसके

स्थान पर सामान्य रूप से संसार के बारे में अनुभव सिद्व व तर्कसंगत क्रियाविधियों तथा सिद्वांतों का पनपना आरंभ हुआ।

धर्मनिरपेक्षीकरण की प्रक्रिया के बारे में विस्तार से चर्चा करते हुए ब्रायन आर.विलसन लिखते हैं– धर्मनिरपेक्षीकरण की प्रक्रिया के अंतर्गत 'विभिन्न समाजिक संस्थाएँ धीरे-धीरे एक दूसरे से अलग हो जाती है तथा वे उन धार्मिक अवधारणाओं की पकड़ से बहुत हद तक मुक्त हो जाती है जिन्होंने इनके संचालन को प्रेरित तथा नियंत्रित किया था। इस बदलाव से पूर्व अधिकतर मानवीय क्रियायों व संगठन के विशाल क्षेत्र से संबंधित सामाजिक प्रक्रिया को पहले से तय धार्मिक सिद्वांतों के आधार पर संचालित किया जाता रहा है। इसमें जीविका व अन्य कार्य, सामाजिक व व्यक्तिगत पारस्परिक संबंध न्याय कार्य-प्रणाली सामाजिक व्यवस्था, चिकित्सा पद्धति आदि शामिल है। यह विशिष्ट तंत्रगत विभाजन की प्रक्रिया है जिसमें सामाजिक संस्थाओं (अर्थ, राजनीति, अचार, विधिन्याय, शिक्षा, स्वास्थ्य व परिवार) को ऐसे भिन्न प्रतिष्ठानों के रूप में मान्यता मिली, जिन्हें संचालन की खासी स्वतंत्रता प्राप्त हो। यह ऐसी प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत पारलौकिक सिद्वांतों का मानवीय मामलों पर से नियंत्रण हट जाता है। ऐसे स्वरूप को मोटे तौर पर धर्मनिरपेक्षता के रूप में पहचाना जाता है। पारलौकिक सिद्वांत धीरे-धीरे सभी सामाजिक संस्थाओं से हट कर केवल पारलौकिक के प्रति समर्पित संस्थाओं या पूरे समाज को अपनी परिधि में लेने वाली धार्मिक संस्थाओं तक ही सीमित रह जाते है। (विलसन 1987: 159)

धर्मनिरपेक्षीकरण की परिभाषा काफी हद तक धर्म की परिभाषा से बंधी हुई है। जहां तक ध र्म को स्पष्ट रूप से तथा मुख्य रूप से पारलौकिक से संबंधित विश्वास सम्मान, क्रियाओं, संस्थाओं तथा तंत्र के रूप में परिभाषित किया जाता है वहाँ तक धार्मिक प्रभाव के ह्रास की सीमा को मापना संभव है। पर यदि हम धर्म को प्रयोजनमूलक विषयों के आधार पर परिभाषित करते है जैसा कुछ समाजशास्त्रियों ने किया है – विश्वास, विचारों तथा क्रियाओं के ढ़ांचे के रूप में, जो समाज के लिए अपरिहार्य कार्य करता है तो उस स्थिति में धर्मनिरपेक्षीकरण शब्द का प्रयोग करना कठिन हो जाता है क्योंकि, जब हम धर्मनिरपेक्षीकरण शब्द का प्रयोग करना कठिन हो जाता है क्योंकि जब हम धर्मनिरपेक्षीकरण शब्द का प्रयोग करते हैं, तब हम उस प्रक्रिया की चर्चा करते हैं जिसके अंतर्गत पारलौकिक से संबंधित क्रियाओं तथा विश्वासों का जीवन के सभी पहलुओं में ह्रास होता है। तथा समाज में विभिन्न संस्थाओं का विशिष्ट रूप से अलगाव होता है।

हम पारलौकिक विश्वास का धर्मेत्तर क्रियाओं से विच्छेद जैसे बीमारी के प्रति दृष्टिकोण तथा समझ, के रूप में देख सकते हैं। हमें सदैव किसी रोग तथा बीमारी को समझने के लिए पारलौकिक कारण उपल्ब्ध नहीं होते। इसके स्थान पर हमारे पास वैज्ञानिक व प्रयोगसिद्व कारण होते है। वास्तव में, इन परिवर्तनों ने स्वयं धर्म को भी प्रभावित किया है।

12.2.3 धर्म के भीतर धर्मनिरपेक्षीकरण

धर्मनिरपेक्षीकरण का एक पहलू यह है कि सभी धर्म अपने सिद्वांतों व व्यावहारिक प्रक्रियाओं को अपने सदस्यों की बदलती आवश्यकताओं तथा समाज की बदलती स्थिति के अनुरूप ढ़ाल लेते हैं।

उदाहरणतया, 1976 में अमेरिका के एपिसकोपल चर्च ने आधिकारिक रूप से महिलाओं को पादरी बनने की अनुमति प्रदान की। इंगलैंड में भी अभी हाल ही में महिलाओं को पादरी बनने की अनुमति प्रदान की गई है। जिसका विरोध भी हुआ है। हम देखते हैं कि किस प्रकार चर्च ने बदलती परिस्थिति व समाज में महिलाओं की बदली स्थिति को मानते हुए कार्य किया।

धर्म निरपेक्षीकरण धार्मिक विश्वास के विषय को भी प्रभावित करता है तथा इससे कई अवसरों पर यह एक नये पंथ के विकास को आरंभ करता है। धर्म में धर्मनिरपेक्षीकरण प्रायः जनसामान्य से संबंधित मामलों के प्रति बढ़ती चिंता के साथ जुड़ा है। धर्मत्तर व सांसारिक क्रियांए भी उतनी ही महत्वपूर्ण हैं जितनी कि धार्मिक। इसी कारण हम धार्मिक संस्थाओं को आधुनिक अस्पतालों, धर्मनिरपेक्ष शिक्षा संस्थानों अथवा परोपकारी कार्यो के संचालन में संलग्न पाते हैं। औद्योगिक समाजों में धर्म बहुधा हमारे समय की तर्कसंगतता को दर्शाता है तथा ऐसा करने में पारलौकिक से अधिक दूर होता जा रहा है।

अभी तक हमने धर्मनिरपेक्षीकरण शब्द के अर्थ की विभिन्न परिस्थितियों तथा पहलुओं के संदर्भ में चर्चा की। हमने अभी तक धर्मनिरपेक्षता के बारे में चर्चा नहीं की है।

12.2.4 मूल्य के रूप में धर्मनिरपेक्षता

फ्रांसीसी क्रांति के बाद धर्मनिरपेक्षता नए राजनीतिक दर्शन का आदर्शवादी उद्देश्य बन गई थी। कुछ समय पश्चात 1851 में जॉर्ज जेकब होलिओक ने 'धर्मनिरपेक्षता' शब्द का प्रतिपादन किया। उसने इसे एकमात्र राजनीतिक व सामाजिक संगठन का तर्कसंगत आधार बताया। होलिओक ने सामाजिक समूह के धार्मिक आधार के बारे में प्रश्न उठाते हुए धर्मनिरपेक्षता को राज्य की आदर्श विचारधारा के रूप में आगे बढ़ाया। जो भौतिक साधनों द्वारा मानवीय कल्याण को प्रोत्साहित करती है तथा दूसरों की सेवा को अपना कर्तव्य समझती है।

धर्मनिरपेक्षता एक प्रकृतिवादी विचारधारा के रूप में फ्रांसीसी क्रांति के बाद के उदारवादी व प्रजातांत्रिक राज्य की आवश्यक योग्यता थी। यह मानदंड आधुनिक प्रजातांत्रिक राज्य पर भी लागू किया जाता है।

अपनी परिभाषा तथा उदारवादी व प्रजातांत्रिक नीति के कारण आधुनिक राज्य समूह जातियों, वर्गों आदि में भिन्न धार्मिक रूझान के आधार पर भेद नहीं करता। राज्य के राजनीतिक दर्शन के अनुसार यह निर्धारित किया गया कि राज्य अपनी ओर से लोगों पर किसी धर्म विशेष को नहीं लादेगा तथा न ही किसी समूह विशेष पर अपने धर्म के अनुसार क्रिया-कलाप करने पर प्रतिबंध लगाएगा।

इस प्रकार धर्मनिरपेक्षता को विचारगत उद्देश्य के रूप में लेते हुए, इस विचारधारा के प्रस्ताव विशेषरूप से सामाजिक संगठनों के आधार के रूप में धार्मिक रूढ़िवादिता की भर्त्सना करते हैं तथा सामाजिक मूल्यों की वकालत करते हैं।

आदर्श विचारधारा के रूप में धर्मनिरपेक्षता आंशिक रूप में यूरोप में धर्मनिरपेक्षीकरण की प्रक्रिया का प्रतिफल है तथा कई आधुनिक राज्यों में इसे किसी ऐतिहासिक विकास प्रक्रिया में संलग्न हुए बिना, (जैसा यूरोप में इस बाद के उभरने के समय हुआ था) राज्य की नीति के रूप में अपना लिया गया।

आइये हम इतिहास में झांक कर देखें कि धर्मनिरपेक्षता की प्रक्रिया किस प्रकार विकसित हुई।

12.3 धर्मनिरपेक्षीकरण की प्रक्रिया

इस अनुभाग में हम धर्मनिरपेक्षीकरण की प्रक्रिया की चर्चा करेंगे जो निश्चित रूप से चर्च व राज्य के बीच संघर्ष के फल के रूप में उभरी। इस संघर्ष की सामजिक पृष्ठभूमि ने एक प्रकार से इस धर्मनिरपेक्षीकरण प्रक्रिया को दिशा भी प्रदान की।

12.3.1 धर्म व धर्मनिरपेक्ष शक्तियों के बीच का संघर्ष

हम इतिहास को देखें तो धर्मनिरपेक्षीकरण लगातार उभरता रहा है। कभी कम अथवा कभी अधिक। यह आदिकालीन समाजों में बहुधा यह देखा गया कि पारलौकिक के बारे में भ्रम व तर्कसंगत पद्धतियों का भी सम्मिश्रण था। चमत्कारी साधनों को तर्कसंगत पद्धतियों के साथ मिलाया गया था। धीरे-धीरे मानवजाति अधिक वास्तविकता के संबंधित, प्रयोगसिद्ध तथा तर्कसंगत दृष्टिकोण अपनाती चली गई। तथा वह प्रक्रिया जिसे मैक्स वेबर ने संसार की जादू-टोने के प्रभाव से मुक्ति करती चली गई।

वास्तव में, कुछ समाजशास्त्री धर्मनिरपेक्षीकरण का उद्‌गम एक ईश्वरवादी धर्मों के विकास में देखते हैं, जिसने पारलौकिक शक्ति को तर्कसंगत व प्रणालीबद्ध रूप प्रदान किया। इन एक ईश्वरवादी धर्मों यथ्य यहूदी धर्म तथा ईसाई धर्म ने लगातार छिट-पुट चमत्कारी धार्मिक विश्वास को नष्ट किया तथा बढ़ते हुए सर्वोच्च तथा विश्वव्यापी ईश्वर के सार्वभौमिक सिद्वांत का प्रतिपादन किया। इस प्रक्रिया में इन एक ईश्वरवादी धर्मों ने प्रणालीबद्वता अथवा तर्कसंगतता की प्रक्रिया को आगे बढ़ाया जो धर्मनिरपेक्षकरण का एक तत्व है।

12.3.2 चर्च तथा राज्य

यूरोप में बहुत पहले समय से रोमन कैथोलिक चर्च का जीवन के सभी पहलुओं पर अत्याधिक अधिकार रहा है।

सम्राट कांस्टैंटाइन (306-37 ई.) के धर्म परिवर्तन तथा सामाजिक रूप से प्रभावशाली वर्ग ने चर्च को धर्मेत्तर संसार में प्रवेश के लिए अत्याधिक मान्यता व अवसर प्रदान किए। सम्राट कांस्टैंटाइन ने ईसाई धर्म को रोमन साम्राज्य के राज्य धर्म के रूप में स्थापित किया।

बॉक्स 1

कांस्टैंटाइन ने अपनी सफलताओं का श्रेय ईसाई धर्म के ईश्वर को दिया। कहा जाता है कि उसने एक स्वप्न देखा जिसमें ईश्वर ने उसे आदेश दिया कि क्राइस्ट के प्रथम दो अक्षर ग्रीक में अपने सैनिकों की ढ़ालों पर लिखें। कांस्टैटाइन ने ऐसा ही किया और उसे विजय प्राप्त हुई। कहा जाता है कि इसके बाद उसने ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया तथा इसे अपना राज्य धर्म घोषित किया। इसके बाद से उसे सैनिक अपनी ढ़ालों पर ईसाई धर्म के चिह्नों का प्रयोग करने लगे।

इस प्रकार का भी विचार था कि चर्च केवल मानवीय आत्माओं के उद्वार हेतु ही नहीं था वरन इसका संसार के लिए भी एक उद्देश्य था, धरती पर ईश्वर के साम्राज्य की स्थापना। पादरी वर्ग केवल जीवन के पारलौकिक पहलुओं में ही नहीं वरन धर्मेत्तर जीवन में भी दखल रखता था। बाद में सेंट अगस्टाइन के आध्यात्मिक ज्ञान तथा बेनेडिक्टाईन व्यवस्था-जिसने उपयोगी कार्य की प्रस्तावना की – ने चर्च और धर्मेत्तर संसार के बीच संबंध स्थापित करने का प्रयास किया। जैसा कि वेबर ने पाया, श्रम ईसाई जीवन का एक आवश्यक तत्व बन गया।

धर्म प्रदान विधि-व्यवस्था व प्रशासनिक संस्थाओं के जरिए चर्च का संगठन अधिक औपचारिक तथा पद्वतिबद्व हो गया। उभरते सामंतशाही समाज की केंद्रित तथा वर्ग-विभाजित प्रकृति की पृष्टभूमि में यह विकास विशेष रूप से निर्णायक बना। इन प्रवृतियों के चलते चर्च मूलभूत एकता को बनाए रख सका।

जीवन के धर्मेतर पहलुओं में इसके दखल के साथ संगठनात्मक एकता ने चर्च को सामाजिक तथा राजनीतिक जीवन में अत्यधिक प्रभाव प्रयोग करने योग्य बनाया। अत्यधिक संकुचित विचारधारा वाले मध्ययुगीन यूरोप के समाज में, जहां समाज संपन्न उच्च वर्ग तथा गरीबों में विभाजित था, चर्च की भूमिका इस संकुचित व्यवस्था की भर्त्सना करने में नगण्य थी। वास्तव में चर्च सामतंशाही व्यवस्था के साथ इतना घुला-मिला था कि यह संपति-धारक बन गया। पादरी वर्ग भूमि का स्वामी बन बैठा, जिसके पास राजनीतिक अधिकार क्षेत्र थे।

इस तरह की परिस्थितियों ने इस प्रश्न को जन्म दिया कि कहां और किसके पास अधिकार होना है? चर्च के पास अथवा धर्मनिरपेक्ष राज्य के पास?

राज-परिवार तथा आम आदमी दोनों ही चर्च की इस दमनकारी प्रवृति से समान रूप से तंग आ चुके थे तथा दोनों ने राजनीतिक तथा दैनिक जीवन के मामलों पर से चर्च तथा धर्म के नियंत्रण को हटाने के लिए संघर्ष किया।

वे शक्तियां जिन्होंने स्वयं को चर्च के विरोध में खड़ा किया उनकी ताकत धर्मनिरपेक्षता के रूप में जानी गई। इस संघर्ष तथा इसकी प्रक्रिया, जिसने अंततः धार्मिक अधिकारवाद के ह्रास का नेतृत्व किया तथा इसके स्थान पर तर्कसंगत तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण की स्थापना को धर्मनिरपेक्षीकरण का नाम दिया।

समाज का धर्मनिरपेक्षीकरण केवल चर्च तथा राज्य के बीच संघर्ष का ही परिणाम नहीं है वरन सामाजिक बदलाव के अन्य पहलुओं से भी जुड़ा है।

अगले अनुभाग में हम उस सामाजिक संदर्भ पर दृष्टि डालेंगे जिसके अंतर्गत धर्मनिरपेक्षीकरण हुआ।

बोध प्रश्न 1

नोटः 1) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

2) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) धर्मनिरपेक्ष का शब्दिक अर्थ क्या है? अपना उत्तर चार पंक्तियों में दीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) फ्रांसीसी क्रांति के बाद के राजनीतिक दर्शन पर पाँच पंक्तियाँ लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

3) ईसाई धर्म अपनाने वाला पहला रोमन सम्राट कौन था? अपना उत्तर चार पंक्तियों में दीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

12.4 धर्मनिरपेक्षीकरण की प्रक्रिया का सामाजिक संदर्भ

इस अनुभाग में हम सामाजिक परिवर्तन के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा करेगे। यूरोप में धर्मनिरपेक्षीकरण के समय, समाज अपनी मध्ययुगीन तंद्रा को भंग कर परिवर्तन के नये क्षेत्रों की ओर अपनी आँखे खोल रहा था। प्रश्नों के लिए तर्कसंगत व प्रयोगसिद्व उतरों की मांग बढ़ रही थी। चर्च में सुधारवाद की प्रक्रिया चल रही थी तथा कला-कौशल व विद्या के संबंध में नवजागरण चल रहा था।

12.4.1 नवजागरण काल

14वीं तथा 16वीं शताब्दी में यूरोप में कई व्यक्ति जो पढ़ना-लिखना जानते थे, उन्होंने इस बात की ओर ध्यान देना कम कर दिया कि उनके शासक तथा पादरी उन्हें क्या बताते हैं। उन्होंने अपने लिये नये विचारों पर कार्य करना आरंभ किया। उनकी रुचि प्राचीन यूनानियों तथा रोमनों की कला तथा ज्ञान के प्रति भी बढ़ी। सोच के इस नये तरीके तथा प्राचीन ज्ञान की पुनःखोज ने इतिहास में एक ओजस्वी काल को जन्म दिया, जिसे 'रेनेसा' के नाम से जाना जाता है। इस फ्रांसीसी शब्द का अर्थ है- नवजागरण।

तर्कसंगत ज्ञान इस आंदोलन का मूल था, तथा यह बात कला, भवन निर्माण, संगीत, साहित्य आदि में प्रकट हुई। नवजागरण काल में विचार तथा शिक्षा के प्रति योगदान के रूप में प्राचीन संपदा पर बल दिया गया। नवजागरण काल में लोगों की उत्सुकता उस संसार के बारे में बढ़ी जिसमें वे रह रहे थे। धनी लोगों ने पुस्तकालयों तथा विश्वविद्यालयों का निर्माण किया। छापेखाने के अविष्कार के कारण पुस्तकें केवल पादरियों व विद्वानों को ही नहीं वरन जनसमान्य को भी सरलता से उपल्ब्ध होने लगी। 16वीं शताब्दी के अंत तक नवजागरण– जिसका आरम्भ इटली में हुआ था– कला व ज्ञान के प्रति जागृति के कारण यूरोप के अन्य भागों में फैल गया। यहीं वह काल था जिसमें विज्ञान की भी उन्नति हुई।

12.4.2 विज्ञान की उन्नति

जैसा कि हमने पहले बताया, मध्ययुगीन यूरोपीय समाज की विशिष्टता चर्च का हर मामले पर बढ़ा प्रभाव थी। यहां तक कि ज्ञान-प्राप्ति भी धार्मिक किस्म की ही थी। नवजागरण अथवा पुनर्जागरण के काल में तर्कसंगत खोज का आरंभ देखने को मिला। इसने ज्ञान के क्षेत्र में व्याख्या तथा आलोचना के क्षेत्र चिह्नित किया।

देखने तथा परीक्षण व प्रयोग करने के इस विकास ने विश्व की प्रकृति के संबंध में नई धारणाओं को जन्म दिया। तर्कसंगत तथा पद्धतिबद्व, प्रयोगसिद्ध ज्ञान ने विश्व संबंधी पारलौकिक धारणाओं के बारे में प्रश्न उठाएं तथा मानव के प्रकृति से जूझने व उस पर काबू पाने की योग्यता के बारे में जागृति पैदा की।

यहीं काल था जिसने कोपरनिकस क्रांति को भी देखा। इससे पहले यह विश्वास प्रबल था, कि पृथ्वी अपनी जगह स्थिर है तथा सूर्य व अन्य अंतरिक्ष ग्रह इसके चारों ओर चक्कर लगाते हैं। कोपरनिक्स ने विस्तारपूवर्क व्याख्या करते हुए इसका प्रदर्शन किया कि पृथ्वी एक स्थिर सूर्य के चारों ओर घूमती है। कोपरनिक्स की इस खोज ने उन मूल आधारों को ही ध्वस्त कर दिया जिस पर पुरानी दुनिया चल रही थी। स्वर्ग, पृथ्वी तथा जीवन के पवित्र उद्‌गम स्रोतों के बारे में ही अब प्रश्न चिहन उठाए जाने लगे थे। इसी काल में विज्ञान की अनेकों विद्याओं का विकास सामने आया। विलियम हारवे ने रक्त के संचार के बारे में खोज की। इसने मानव शरीर के बारे में पुनर्विचार करने की आवश्यकता पैदा की। भौतिकी में गैलिलीयो गैलीली, जॉन केपलर तथा बाद में आइजक न्यूटन ने पूर्व से चले आ रहे आध्यात्मिक-विद्या पर आधारित ब्रहमांड संबंधी विचारों को हिला कर रख दिया। संक्षेप में, विज्ञान की उन्नति व प्रयोग ने मानव की धर्म तथा विश्व के बारे में धार्मिक विचारधारा पर निर्भरता को कम कर दिया।

12.4.3 व्यापार व वाण्ज्यि का विकास

15वीं शताब्दी ने जीविका आधारित तथा स्थिर अर्थव्यवस्था को गतिशील तथा विश्वव्यापी व्यवस्था को और मोड़ने में भी दिशा प्रदान की। व्यापार का विकास कुछ हद तक यूरोपीय राज्यों द्वारा उनकी आर्थिक व राजनीतिक शक्ति को विकसित तथा स्थापित करने के लिए उठाये गये कदमों के कारण भी हुआ। पुर्तगाल, स्पेन, हालैंड तथा इंग्लैंड की राजशाही ने समुद्र पर खोजों, व्यापार तथा राज्यों को जीतने की क्रियाओं का प्रायोजित किया।

बॉक्स 2

पूर्व के साथ व्यापार अब तक केवल मार्ग द्वारा होता था तथा इतालवी शहरों का इस पर एकाधिकार को समाप्त करने के लिए तथा पूर्व तक पहुँचने के रास्ते खोजने के उद्देश्य से पुर्तगाली व अन्य प्रमुख नाविकों ने समुद्री यात्रा का मार्ग अपनाया। आपने वास्को-डि-गामा की ऐतिहासिक समुद्री यात्रा के बारे में अवश्य सुना होगा जो 1498 में भारत के पश्चिमी तट पर उतरा। क्रिसटोफर कोलम्बस ने भी भारत तक समुद्री मार्ग खोजने के उद्देश्य से ऐसी ही यात्रा आरंभ की पर वह भारत के स्थान पर उतरी अमेरिका के तट पर पहुँच गया।

ब्रिटेन व हालैंड ने भी स्पेन तथा पुर्तगाल का अनुसरण किया। शीघ्र ही भारत, दक्षिण-पूर्व एशिया अफ्रीका, वेस्ट इंडीज तथा दक्षिण अमेरिका इन देशों के आर्थिक घेरे में आ गए।

यूरोपीय बाजारों में नयी वस्तुओं, मसालों, कपड़ों, तम्बाकू, कोको, हाथी दांत, सोना, चांची और इन सबसे बढ़कर अफ्रीका से लाए मानव गुलामों की बहुतायत हो गई थी। व्यापार व वाणिज्य के इस विकास का महत्वपूर्ण परिणाम था- मध्यम वर्ग का विकास। यह वर्ग, जिसमें व्यापारी, बैंकर, समुद्रीपोत शामिल थे, प्रभावशाली तथा राजनीतिक दृष्टि से शक्तिशाली वर्ग बन गया।

इन क्रांतिकारी परिवर्तनों के साथ ही विचारधारा तथा धर्म-संस्था संगठन में विच्छेद उत्पन्न हुआ जिसे सुधारीकरण के रूप में पहचाना जाता है।

12.4.4 सुधारीकरण

16वीं शताब्दी में, ईसाई धर्म के अंदर ही एक आंदोलन चल रहा था जिसका उद्देश्य मध्ययुगीन कुरीतियों को समाप्त कर उस सिद्वांत तथा रीतियों का पुनर्स्थापन करना था जो

सुधारवादियों के अनुसार बाइबिल के अनुरूप थे। इसके कारण रोमन कैथोलिक चर्च तथा सुधारवादियों में विच्छेद हो गया। सुधारवादियों के सिद्वांत व रीतियों को प्रोटेस्टैंटवाद का नाम दिया गया।

इस आंदोलन के मुख्य प्रवर्तकों में से एक मार्टिन लूथर ने रोमन कैथोलिक चर्च की रीतियों पर प्रश्न चिह्न लगाया तथा शास्त्रार्थ की मांग की। पोप ने इसे बगावत का सूचक माना तथा लूथर के खिलाफ उसे नास्तिक मानते हुए कार्यवाही करने के लिए कदम उठाए। मार्टिन लूथर ने झुकने से तब तक के लिए इनकार कर दिया जब तक उसे बाइबिल के अनुसार अथवा स्पष्ट कारणों के आधार पर गलत साबित न किया जा सके-लूथर का विश्वास था कि पापों से मुक्ति सभी लोगों को सामन्य रूप से मुक्त उपहार के रूप में उपलब्ध थी जो ईश्वर की कृपा द्वारा अपराधों की माफी के रूप में प्राप्त थी। उसके अनुसार ईश्वर की यह कृपा ईसा मसीह में आस्था के द्वारा सभी को उपलब्ध थी। लूथर का बचाद राजाओं व राजकुमारों ने आंशिक रूप से अपनी धार्मिक विचारधारा व प्रतिबद्वता के कारण किया पर मुख्यतः ऐसा करने के पीछे उनका उद्देश्य चर्च की संपति हथियाना तथा अपनी राजकीय स्वतंत्रता की पुनर्स्थापना था।

सुधारवाद का स्पष्ट परिणाम है; ईसाईयत का कैथोलिक व प्रोटेस्टैंट संप्रदायों अथवा मतों में विभाजन। इन्होंने आधुनिक राष्ट्रीय राज्यों के विकास को मजबूती प्रदान की। सुधारवाद ने चर्च के संगठन तथा विचारधारा में क्रांतिकारी परिवर्तन प्रस्तुत किया। इस प्रकार धर्म निरपेक्षीकरण की प्रवृति आरंभ हुई। पारलौकिक के संबंध में प्रोटेस्टैंट विचारधारा ने ईश्वर को व्यक्तिगत बना दिया। इस प्रकार ईश्वर को व्यक्तिगत धरातल तक लाया गया। व्यक्तिगत सांसारिक क्रिया को ईश्वर में आस्था के प्रतीत के रूप में प्रोत्साहित किया गया। जैसा कि हमने ऊपर उल्लेख किया है, उस समय कारकों का ऐसा जटिल जाल बना हुआ था जिससे धर्मनिरपेक्षीकरण प्रक्रिया के उद्भव को सहायता मिली। उपर्युक्त चर्चा में, हमने संदर्भ को ध्यान में रखकर कुछ ऐसी प्रवृतियों या घटनाओं का उल्लेख किया है जिसमें धर्मनिरपेक्षीकरण की प्रक्रिया पनपी।

जैसा कि अब हमने धर्मनिरपेक्षीकरण की अवधारणा और इसके पीछे के इतिहास को खोज लिया है, आइए देखें कि समकालीन जगत में इसका क्या अर्थ है। (इस प्रकार चर्चा के लिए देखें इकाई 10, धर्म तथा आर्थिक व्यवस्था)।

12.5 समकालीन जगत में धर्मनिरपेक्षता

यह सच है कि धर्म का अब वैसा नियंत्रण नहीं रहा जैसा मध्ययुगीन समाज में था। हम संसार को अब रहस्यमयी धार्मिक विचारों के आधार पर परिभाषित नहीं करते। ऐसा प्रतीत होता है कि धार्मिक संस्थाएँ समाज के केंद्र के रूप में नही रहीं। पर यह धर्मनिरपेक्षीकरण पूरे विश्व में समान रूप से नही उभरा। हमें ध्यान रखना चाहिए कि जिन घटनाओं का हमने वर्णन किया है व विशिष्ट रूप से यूरोप के संदर्भ में है तथा उन परिर्वतनों का कुछ प्रभाव अन्य देशों पर भी पड़ा। पर भावनामय धर्म की संवेदनशीलता तथा धर्म के नए रूप धर्मनिरपेक्षीकरण की इस प्रक्रिया से अलग रहे। धार्मिक भावनाओं के प्रतिरूप भिन्न हो सकते हैं। तथा धर्म धर्मनिरपेक्षीकरण के सूचकों के बावजूद आध्यात्मिक जीवन तथा नए धार्मिक विचार उभरते रहे हैं।

अनगिनत नए धार्मिक आंदोलन पिछले दशकों में उभरे हैं तथा ये सामान्य धर्मनिरपेक्षीकरण की प्रतिक्रियाओं के रूप में भी प्रतीत हो सकते हैं; क्योंकि ये लोगों के एक समूहविशेष को अर्थ, उद्देश्य, पारस्परिक संबंध तथा सहारा प्रदान करते हैं। धर्मनिरपेक्षीकरण, जैसा हमने कहा, पश्चिमी समाज में लंबे समय में उभरी जटिल ऐतिहासिक घटना है।

सोचिये और करिये 1

भारत में धर्मनिरपेक्षीकरण और धर्मनिरपेक्षता किस सीमा तक मौजूद है? इसके लिए समाचार पत्रों और पत्रिकाओं को पढ़िए और नोटबुक में अपना उतर लिखने से पहले इस संदर्भ में अन्य विद्यार्थियों और ज्ञानवान व्यक्तियों से बातचीन कीजिए।

अन्य धार्मिक पद्वतियों ने रहस्यमयी तथा मूर्तिपूजक विश्वासों को संगठित व प्रणालीबद्व अवश्य किया, पर ऐसा भिन्न प्रकारों से किया गया। ब्रायन विलसन के अनुसार हिंदू तथा बौद्व धर्म ने आदिकालीन पारलौकिकवाद को हटाने से अधिक उसे सहन किया। साथ ही धर्म निरपेक्षीकरण की लंबी ऐतिहासिक प्रक्रिया तथा सामाजिक जीवन के सभी क्षेत्रों में तर्कसंगत सिद्वांत का विस्तार गैर-पश्चिमी देशों जैसे एशिया अथवा मध्य-पूर्व में इतना तीव्र नहीं था। उद्योगीकरण तथा तकनीकी विस्तार कुछ हद तक सामाजिक जीवन के ताने-बाने को तर्कसंगत व नियमित बनाता है। फिर भी, अनेकों धार्मिक तथा चमत्कारी रीतियों के परिष्कृत औद्योगिक तकनीकों के साथ-साथ रहने का विरोधाभास भी एक वास्तविकता है

औद्योगिकरण की प्रक्रिया ने अलग-अलग रास्ते अपनाए हैं तथा पश्चिम में उपलब्ध उदाहरण से अलग-अलग रूप अपनाए हैं। अगले अनुभाग में हम धर्मनिरपेक्षीकरण तथा धर्मनिरपेक्षता के भारतीय अनुभव की चर्चा करेंगे।

बोध प्रश्न 2

नोटः 1) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

2) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) ..... ने रोमन कैथोलिक चर्च की रीतियों पर प्रश्न चिह्न लगाया।

2) निम्नलिखित का मिलान कीजिएः

क	**ख**
वास्को-डि-गामा	भौतिक के क्षेत्र में क्रांति
विलियम हार्वे	भारत के लिए जलीय मार्ग
कोपरनिक्स	प्रोटेस्टैंटवाद
मार्टिन लूथर	रक्त-संचार

12.6 भारत में धर्मनिरपेक्षता

इस अनुभाग में हम भारत में धर्मनिरपेक्षीकरण की स्थिति तथा इसके व्यावहारिक रूप के बारे में चर्चा करेंगे अब तक हम इस बात से परिचित हो चुके हैं कि भारत में धर्मनिरपेक्षीकरण की प्रक्रिया उस तरह नहीं चली जिस तरह यूरोप में। पर भारतीय परिस्थिति ने अपनी ऐसी दशाएं पैदा कर ली जिन्होंने हमारे राष्ट्रीय नेताओं को धर्मनिरपेक्ष विचारधारा की आवश्यकता को महसूस करने पर मजबूर किया। आइये देखें कि कैसे? विचारधारा की आवश्यकता को महसूस करने पर मजबूर किया। आइये देखें कि कैसे? पर सर्वप्रथम हम भारत में धर्मनिरपेक्षता के अर्थ को समझने का प्रयास करेगे।

12.6.1 भारत और धर्मनिरपेक्षता

जैसा की हम जानते हैं, भारत अनेकों धर्मों की भूमि स्थान है तथा बहुधर्मी-समाज है। धर्म भारतीयों के जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। धार्मिक द्वंद्व तथा सांप्रदायिक दंगे भारतीय समाज कि बहुधर्मिता के कारण हमारे समाजिक जीवन का हिस्सा बन गए हैं।

यह स्थिति ऐसे तथ्य को उजागर करती है कि जब समाज में बहुत से धर्मों का बोलबाला हो तो शासन का कार्य अधिक कठिन हो जाता है।

हमारे नेताओं ने इस स्थिति की प्रतिक्रिया स्वरूप धर्मनिरपेक्षता के मूल्यों को मजबूत करने पर बल किया है। धर्मनिरपेक्ष विचारों को हमारे संविधान में भी समाहित किया गया।

12.6.2 भारत में धर्मनिरपेक्षता का अर्थ

अपनी पिछली चर्चा में हमने देखा कि किस प्रकार पश्चिम में धर्मनिरपेक्षता एक धर्मनिरपेक्षीकरण प्रक्रिया का परिणाम था जहाँ कि दैनिक जीवन में हावी धार्मिक प्रभाव ने अपनी शक्ति खो दी।

तथापि भारत में धर्म धर्मनिरपेक्षीकरण तथा धर्मनिरपेक्ष का प्रयोग राज्य की प्रवृति के संदर्भ में किया गया है, इसे रूप में समाज की बहुधर्मिता तथा धार्मिक द्वंद्वों को ध्यान में रखते हुए अपनाया गया है। भारत में धर्मनिरपेक्षता शब्द से अभिप्राय है कि राज्य किसी एक धर्म विशेष से अपना संबंध नही रखेगा वरन सभी धर्मों के व्यवहार को समान रूप से मानेगा। जैसा नेहरू ने 1950 में घोषणा की थी। 'भारत जैसे देश की सरकार जहाँ अनेक धर्म तथा उनके प्रति समर्पित कई पीढ़ियों से चले आ रहे उनके मानने वाले बसते हैं, वर्तमान युग में धर्मनिरपेक्ष आधार के अभाव में कभी संतोषजनक रूप से कार्य नहीं कर सकती'।

धर्मनिरपेक्षता के आदर्श को स्वतंत्रता संग्राम के दौरान विभिन्न धर्मों को मानने वाले समूहों को उपनिवेशी शक्ति के विरूद्व इकठ्ठा करने के लिए अपनाया गया। धर्मनिरपेक्षता के विचार की परिपक्वता स्वतंत्रता संग्राम के लंबे संघर्ष के दौरान राष्ट्रीयता के विकास से करीबी तौर पर जुड़ी है। बाद में धर्मनिरपेक्ष विचार को संविधान में निहित किया गया तथा नेहरू के लिए धर्मनिरपेक्षता की आवश्यकता केवल जन-जीवन के धर्म से विच्छेद के लिए ही नहीं वरन प्रगतिशील तथा आधुनिक दृष्टिकोण के लिए थी। इसका यह भी अभिप्राय था कि सभी नागरिकों के अधिकार तथा सामाजिक स्थिति बराबर है।

अतः धर्मनिरपेक्षता, राष्ट्रीयता तथा प्रजातंत्र परस्पर एक दूसरे को मजबूती प्रदान करने वाले आदर्श हैं जिन पर भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के राज्य में विशेष बल देने का प्रयास किया गया।' (भट्टाचार्य, 190: 178) के.एम. पणिक्कर भारत में धर्मनिरपेक्ष राज्य के विषय की व्याख्या करते हुए इस बात पर विशेष जोर देते हैं।

'यह (धर्मनिरपेक्ष राज्य) राजनीति के ढ़ाचे से इसी नीति के आधार पर लोगों में भेद करने के सभी विचारों को समाप्त कर देता है। जैसा अरस्तू ने इसे ''न्याय क बंटवारे का नाम दिया है'', अर्थात सभी वर्गों की भागीदारी इसमें उसी प्रकार समान है जिस प्रकार एक नागरिक के रूप में कर्तव्यों व जिम्मेदारियों में।''

इस प्रकार की राज्य नीति के परिणामों में एक यह भी है कि सरकारी पद तथा सरकारी सेवा की प्राप्ति किसी प्रकार के धार्मिक रूझान पर आधारित नहीं होनी चाहिए।

फिर भी सभी नागरिक अपने धर्म को मानने तथा पूजा-उपासना की स्वतत्रता को मूलभूत अधिकार के रूप में प्राप्त करते हैं। यद्यपि भारतीय संविधान किसी भी प्रकार के धर्म-आधारित अंतर का विरोध करता है, यह राज्य को अविकसित वर्ग की बेहतरी के लिए कानून बनाने से नही रोक सकता। इस अविकसित वर्ग में अल्पसंख्यक वर्ग भी सम्मिलित हैं। इस प्रकार, अल्पसंख्यकों का समान सांस्कृतिक व शैक्षणिक अधिकार प्राप्त है।

हमारे संविधान में निहित धर्मनिरपेक्ष आदर्श समान नागरिकता तथा जातिगत पहचान का विशिष्ट सम्मिश्रण है। यह प्रजातांत्रिक राष्ट्र-राज्य के अंदर विभिन्नताओं को मान्यता प्रदान करता है।

हमारी राज्य-नीति में निहित इस विरोधाभास के कारण वास्तविकता में धर्मनिरपेक्षता के आदर्श को व्यवहार में लाने में कठिनाई आती है। आइए हम इतिहास में पीछे चलें तथा देखे कि किस प्रकार धर्मनिरपेक्ष आदर्श को अपनाया गया तथा इस विचार से कौन सी समस्याएं जुड़ी है।

सोचिये और करिये 2

आपकी राय में राजनीतिक अखाड़े में क्या धार्मिक दलों का प्रवेश वर्जित किया जाना चाहिए? अपने उत्तर के उचित कारण दीजिए। इस बारे में आप अपने अध्ययन केंद्र के अन्य विद्यार्थियों और परामर्शदाता से चर्चा कर सकते है।

12.6.3 धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा तथा आदर्शवाद

भारतीय राजनीति में ब्रिटिश दखलंदाजी से पूर्व धर्म तथा राजनीति के बीच कोई संघर्ष नही था। वास्तव में जैसा ड्यूमोंट ने पाया : धर्म यहाँ पर समाज का मुख्य बंधन-सूत्र है राजनीति व अर्थव्यवस्था न तो स्वायत संस्थाएँ हैं और न ही वे धर्म के विपरीत हैं। वे सामान्य रूप से धर्म की परिधि में ही आती है। ड्यूमोंट का स्मरण करते हुए टी.एन. मदान महसूस करते हैं कि 'धर्म व निरपेक्षता को अलग नहीं किया जा सकता। दूसरे शब्दों में धर्म का किसी भी अर्थपूर्ण भाव में निजीकरण नहीं किया जा सकता'। (मदान, 1981: 12) तथापि ब्रिटिश राज के आगमन के कारण कुछ परिवर्तन आया। ब्रिटिश राज्य ने तटस्थता का रूख अपनाया। आगे चल कर ब्रिटिश राज ने कानून के समक्ष बराबरी के विचार को प्रस्तुत किया जिसके अंतर्गत जाति व धर्म आदि का कोई महत्व नहीं था। परंपरा में इस परिवर्तन के साथ ही, आधुनिक शिक्षा भी परिवर्तन का महत्वपूर्ण वाहक बनी।

भारत में राजनीतिक जागृति का एक महत्वपूर्ण तत्व था – बढ़ता उदारवाद, जो आधुनिक शिक्षा के साथ आया। भारतीय मध्यम वर्ग को ब्रिटिश शिक्षा का सर्वाधिक लाभ मिला तथा इसी वर्ग ने ब्रिटिश राज के खिलाफ राष्ट्रीय संघर्ष की शुरुआत की।

स्थानीय संस्कृतियों के अति तीव्र विकास ने राष्ट्रीयता की भावना को जन-जन तक पहुँचाया। स्थानीय संस्कृतियों के इस विकास को संकीर्ण नहीं बनने दिया गया क्योंकि उद्देश्य के रूप में राष्ट्र सदैव सर्वोपरि रहा। भारतीय राष्ट्रीयता की अधिकांश शक्ति इसके द्वारा धर्म (विशेषकर हिंदू धर्म) की ताकतों, मुहावरों-लोकोक्तियों तथा प्रतीकों के प्रयोग से आई। (कविराज, 190:195)

धर्म को दूर रखने की राष्ट्रीय नेताओं की धर्मनिरपेक्ष विचारधारा को बालगंगाधर तिलक, अरबिंद घोष, लाजपत राय जैसे लोगों द्वारा चुनौती दी गई। कांग्रेस को एक दुविधा का सामना करना पड़ा कि क्या वह जन-सामान्य को प्रेरित करने के लिए धार्मिक प्रतीकों आदि का प्रयोग होने दे अथवा नहीं क्योंकि इस कारण से मुस्लिम वर्ग अलग पड़ सकता था।

1920 तक कांग्रेस का नेतृत्व महात्मा गांधी के पास आ गया। उन्होंने खुले तौर पर राजनीति में धर्म की आवश्यकता को घोषित किया। यद्यपि गांधी हिंदू आस्थाओं से गहरे जुड़े थे, फिर भी वे अनेकता में विश्वास रखते थे तथा सभी धर्मों के लिए उनके मन में समान आदर था। हिंदूओं व मुसलमानों की एकता के लिए गांधी के सभी प्रयासों के बावजूद हिंदू प्रतीकों के

प्रयोग के अधिक्य ने मुस्लिम वर्ग को अलग कर दिया। वहीं से हिंदुओं व मुसलमानों में अतिवादी प्रवृतियों का विकास हुआ। मुस्लिम लींग और हिन्दू महासभा तथा राष्ट्रीय स्वंय सेवक संघ जैसे कट्टरपंथी सामाजिक-धार्मिक संगठनों की स्थापना के कारण राष्ट्रीयता का ध्रुवीकरण हो गया। सीमाओं द्वारा निर्धारित राष्ट्रीयता के स्थान के कारण राष्ट्रीयता का ध्रुवीकरण हो गया। सीमाओं द्वारा निर्धारित राष्ट्रीयता के स्थान पर इन वर्गों ने अब धार्मिक पहचान के आधार पर राष्ट्र के लिए संघर्ष करना आरंभ किया। सुदीप्तों कविराज ने लिखा हैः 'निश्चित रूप से अन्य समुदायों से पहचान तथा राष्ट्र की पहचान के सापेक्ष नवीनतो कारण विभिन्न माध्यमों के द्वारा राष्ट्रीयता की भावना का निर्माण करने की आवश्यकता थी, (इस संदर्भ में मुख्यत : धर्म द्वारा) ताकि ब्रिटिश उपनिवेशवाद का सामना किया जा सके।

1947 में भारत व पाकिस्तान के रूप में भारत का विभाजन दंगों के बीच हुआ। 1948 में गांधी की त्रासदीपूर्ण हत्या की गई। इस घृणित त्रासदी ने भारतीय नेताओं पर राजनीति व धर्म को अलग रखने के लिए धर्मनिरपेक्ष विचारधारा की आवश्यकता का प्रभाव डाला।

बोध प्रश्न 3

नोट :1) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

2) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) भारत में धर्मनिरपेक्षता के अर्थ पर कुछ पंक्तियाँ लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) ..... ने राजनीति में धर्म की आवश्यकता को खुले तौर पर घोषित किया।

12.7 भारत में धर्मनिरपेक्षता

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात नेहरू ने विज्ञान के प्रयोग व विस्तार के सहारे देश के आधुनिकीकरण तथा अज्ञानता, बीमारी व गरीबी के उन्मूलन का कार्य संभाला। नेहरू धर्म के विरूद्व नहीं थे पर व जानते थे कि धर्म भारत के लिए कितना घातक सिद्व हो सकता है। अतः उन्होंने संविधान में धर्मनिरपेक्ष के आदर्श को निहित करने में कोई समय नहीं गंवाया। धर्म को जन-जीवन से अलग नहीं किया गया पर उसे राज्य से दूर रखा गया। निःसंदेह, संविधानिक व कानूनी तौर पर हम एक धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र हैं। पर जो प्रश्न हमें स्वयं से अवश्य पूछना चाहिए वह है– क्या यह धर्मनिरपेक्षता हमें बांधने वाले सूत्र तथा राष्ट्र के अभिन्न अंग के रूप में है? हम पाते हैं कि धर्मनिरपेक्ष राष्ट्रीयता एक ऐसा विचार है जिसे हमने ब्रिटिश उपनिवेशवाद के चलते पश्चिम से ले लिया है। उस समय की घोर आवश्यकता ब्रिटिश राज्य से एक जुट करने के लिए अपनाया गया। आधुनिक शिक्षा वे अंग्रेजी भाषा ने इस आदर्श को प्रतिस्थापित करने में मदद की तथा स्थानीय भाषाओं द्वारा इसे जन-जन तक पहुँचाया गया। इस प्रकार राष्ट्रवाद की एकरूपता को प्राप्त किया गया तथा ब्रिटिश राज्य को हटाया गया।

इस किस्म के राष्ट्रवाद की ओर इशारा करते हुए सुदीप्तों कविराज महसूस करते हैं कि जितनी देर तक राष्ट्रीय आंदोलन ने ब्रिटिश राज्य का सामना किया राजनीतिक व्याख्यानों में राष्ट्र-निर्माण को लगातार इस्तेमाल करने, इसका नामकरण व परिभाषित करने तथा दोहराने की आवश्यकता स्पष्ट थी। स्वतंत्रता-प्राप्ति के पश्चात इस आवश्यकता को फिसलने दिया गया।' (कविराज 1990:198) आगे कहते है कि हमारे नेता जिन्हें यह राष्ट्र विरासत में मिला। उस स्थिति को देखने में असफल रहे जहा आने वाली पीढ़ियां इस राष्ट्र को यथास्थिति रूप स्वीकार नहीं कर पाएंगी।

राज्य तथा इसके सुलझे नेता विभिन्न संस्कृतियों से संवाद स्थापित करने में असफल रहे (जैसा-संघर्ष के समय संभव हो सका था), जो धर्मनिरपेक्षता के इस आदर्श को प्राप्त करने के लिए आवश्यक था। यह विचार जन-सामान्य की मानसिकता से दूर रहा। तथापि यह बताना आवश्यक है कि आम लोग धर्म और इसमें जुड़ी पौराणिक और लोक कथाओं में पूरी तरह ढ़ले हुए हैं। इसलिए भारत जैसे देश में आज अनेक धर्म मौजूद हैं या जहाँ धर्मों की बहुलता है ऐसी स्थिति में यहाँ सामाजिक प्रक्रिया को पूरी तरह से प्रभावित करने में धर्मनिरपेक्षवाद को काफी समय लगेगा।

इसके आतिरिक्त, हमें उन विरोधाभासों का भी सामना करना पड़ता है जो हमारे जैसी उदारवादी प्रजातांत्रिक प्रणाली में मौजूद रहते है, यहां आर्थिक विकास काफी हद तक समान न रहा हो। इसके साथ अन्याय व अभाव का अहसास जुड़ा है जो विभिन्न रास्तों के जरिए अपने को प्रकट करता है। अपने वर्ग के लोगों का आह्वान करना व उन्हें धार्मिक तथा जातिगत आधार पर जुटाना एक आम प्रक्रिया है। दूसरी तरफ राज्य/राजनीतिक पार्टियां, वर्गों का आह्वान उनका समर्थन प्राप्त करने के लिए करती हैं। यह सब केवल पूर्व की धर्म व वर्ग के आधार पर पहचान को पुनः प्रतिष्ठत करता है तथा वे यह जानते हैं कि शासन पर दबाव डालने का एकमात्र रास्ता लोगों को भाषा, जातीयता तथा धर्म के आधार पर इकठ्ठा करना है। अतः जैसा हम देखते है, बहु-धर्मिय जातिगत राष्ट्र में धर्मनिरपेक्षता को पूरी अच्छी नियत के साथ भी हासिल कर पाना कठिन है।

12.8 सारांश

इस इकाई का मुख्य उद्देश्य धर्मनिरपेक्षीकरण के उदभव व प्रक्रिया को समझना था। 'धर्मनिरपेक्षता' इसी धर्मनिरपेक्षीकरण की प्रक्रिया में से उभरी है। धर्मनिरपेक्षता को राज्य की आदर्श विचारधारा के रूप में आधुनिक राज्यों द्वारा अपना लिया गया है।

भारत ने भी धर्मनिरपेक्षता को राज्य-विचारधारा के रूप में अपनाया है। ऐसा भारतीय समाज में व्याप्त अनेकता तथा परिणामस्वरूप वर्गो के बीच उपजे संघर्ष को ध्यान में रखते हुए किया गया है। भारत में धर्मनिरपेक्षता-अनुभाग के अंतर्गत धर्मनिरपेक्षता की प्रकृति व इसके व्यावहारीकरण का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। हमने उस ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की चर्चा की है जिसने भारतीय राजनीति में धर्मनिरपेक्षता के विचार को उभरते हुए देखा। अपने अंतिम अनुभाग में हमने धर्मनिरपेक्षता के व्यावहारीकरण में गतिशीलता की चर्चा की है। भारत जैसे देश में जहाँ धर्म की जडें हमारे समाज में गहराई से बैठी हुई हैं, धर्मनिरपेक्षता को आदर्श विचारधारा के रूप में व्यवहार में ला पाने में कठिनाई है तथा हमारा प्रजातांत्रिक स्वरूप वर्गों की इस धार्मिक आवश्यकता के प्रति छूट का नजरिया अपनाता है।

12.9 संदर्भ

बाब लारेंस, 1986, रिडेम्टिव एनकांऊटरः थ्री माड्रन स्टाइलस् इन दि हिंदू ट्रैडिशन, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेसः दिल्ली

बहस, ए.जे. 1958, फिलोस्फी ऑफ बुद्विज्म, राइडर एंड कं.ः लंदन

बापत, पी.वी., 1856, 2500 ईयर्स ऑफ बुद्विज्म इन इंडिया, प्रकाशन प्रभाग- भारत सरकार नई दिल्ली

भट्ट जी.एस. 1968, बह्म समाज, आर्य समाज एंड दि चर्च- सेक्ट टाइपोलोजी इन रिव्यू ऑफ रिलिज्म रिसर्च, 10/1; दि रिलिजस रिसर्च एसोषिएषनः कनकास (अमेरिका) कैप्स, वाल्टर, एच. 1990, दि न्यू रिलिजस राइट यूनिवर्सिटी ऑफ साऊथ कैरोलिना प्रेसः कैरोलिना

कर्टिस, माइकल 1981 रिलिजन एंड पालिटिक्स इन द मिडिल ईस्ट। ईस्ट-वेस्ट न्यू प्रेसः कैलेरैडो

दर्खाइम ई. 1965 (1912), दि एलिमेंट्री फार्मस ऑफ दि रिलिजम लाइफ, फ्री प्रेसः न्यूयार्क एल्विन वेरियट, 1955, दि रिलिजन ऑफ एन इंडियन ट्राइव, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेसः दिल्ली

फूल्लर क्रिस्टोफर जे. 1990, सर्वेटंस ऑफ दि गौडेसः दि प्रिस्टस ऑफ ए साऊथ इंडियन टैम्पल, कैरोलिना प्रेसः कैरोलिना आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेसः दिल्ली

हम्फ्रे, सी. 1951, बुद्विज्म, पैगुइन

हुसैन, असफ, 1985. इस्लामिक ईरानः रिवोल्यूशन एंड काऊटर रिवोल्यूशन, फ्रांसिस प्रिंटर लि. लंदन

जॉनस, एच.एम. 1968, सोषलिजीः ए सिस्टेमैटिक इंट्रोडक्सन, रूटलेज केगन पॉलः लंदन

कविराज, एस. 190, दि डिस्कोर्स ऑफ सेक्युलरिजम इन विद्युत चक्रावर्ती (सं) सेक्युलरिजम इन इंडियन पॉलिटी, सेगमेंट नई दिल्ली

मदन, टी.एन. 1981,दि हिस्टरिकल स्ट्रगल ऑफ सेक्युलरिजम इन इंडिया इन एस.जी. दुबे (सं.) सेक्युलरिजम इन मल्टी-रिलिजस सोसाइटिज, कन्सेप्टः दिल्ली

....., 1991, रिलिजन इन इंडिया आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेसः दिल्ली

मोबर्ग, डी.ओ. 1961, पोटेंशल यूजिस आफ द चर्च-सेट टाइपोलिजी इन कम्पैरेटिव रिलिजम रिसर्च इन इंटरनेशनल जर्नल ऑफ काम्पैरोटिव सोशालिजी, खंड 2, पष् 47-58

ओ' दि थॉमस एफ. 1969, दि सोशलिजी ऑफ रिलिजन, प्रेंटिस हालः नई दिल्ली

पानिकर, के.एम. ए सर्वे ऑफ इंडियन डिस्ट्री, एशियाः बाम्बे

विल्सन बराइन, आर 1987, सेक्युलिरिज्म इन द इनसाइक्लोपीडिया ऑफ रिलिजन मिर्सिया ईलेट, मैकमिलन (संपा): न्युयार्क एम. इलाएड़, 1987ः इंटरनैशनल इनसाइक्लोपीडिया ऑफ रिलीजन, न्यूयार्क : मैकमिलन

डेविड ई.सिल्स, 1968 : इंटरनैशनल इनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशल साइंसेज, न्यूयार्क : मैकमिलन

कोकलिन, जे.ई, 1984 : इंट्रोडक्शन टू सोशियोलॉजी, मैकमिलन, न्यूयार्क

12.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) धर्मनिरपेक्ष शब्द की उत्पति लैटिन शब्द 'सेक्युलर' से हुई हैं जिसका अर्थ है वर्तमान युग अथवा पीढ़ी धर्मनिरपेक्ष शब्द बाद में धर्मनिरपेक्षीकरण की प्रक्रिया से जुड गया।

2) फ्रांसीसी क्रांति के बाद उभरे नये राजनीतिक दर्शन से राजनीतिक व सामाजिक संगठनों के धार्मिक आधार पर प्रश्न उठाये गये। इसने धार्मिक व सामाजिक संगठनों के लिए तर्कसंगत आधार की सिफारिश की। धर्मनिरपेक्षता को राजनीतिक उद्देश्य के रूप में अपनाया गया। होलीओक ने आशा तथा विश्वास जताया कि राज्य की आदर्श विचारधारा के रूप में धर्मनिरपेक्षता भौतिक साधनों के जरिए मानव कल्याण को प्रोत्साहित करती है तथा दूसरों की सेवा को अपना कर्तव्य बनाती है।

3) सम्राट कांस्टेटाइन (307-37ई) ईसाई धर्म अपनाने वाला पहला रोमन सम्राट था। उसने ईसाई धर्म को राज्य धर्म के रूप में घोषित किया।

बोध प्रश्न 2

1) मार्टिन लूथर

2)

क	ख
वास्को-डि-गामा	भारत के लिए जलीय-मार्ग
विलियम हार्वे	रक्त संसार
कोपरनिक्स	भौतिकी के क्षेत्र में क्रांति
मार्टिन लूथर	प्रोटेसटैंटवाद

बोध प्रश्न 3

1) भारत को धर्मनिरपेक्षता की उस प्रक्रिया से नहीं गुजरना पड़ा जिससे यूरोप गुजरा। इसलिये भारत में धर्मनिरपेक्षता का विकास प्राकृतिक रूप से नहीं हुआ बल्कि यहाँ इसे राजनीतिक लक्ष्य के रूप में अपनाया गया। चूंकि भारत एक ऐसा बहुलवादी देश है जहाँ विभिन्न प्रकार के धर्मों, सम्प्रदायों और भाषाएं बोलने वाले लोग हैं। अतः यहाँ धर्मनिरपेक्षता का अर्थ है कि राज्य किसी एक धर्म का पक्ष नहीं लेगा बल्कि सभी धार्मिक विचारों के प्रति सहिष्णुता अपनायेगा।

2) महात्मा गाँधी

शब्दावली

संबंध : शादी के आधार पर रिश्ते को निर्मित करने का सिद्धांत, जैसे कि आपका रिश्ता आपकी बहन के पति के साथ है।

कृषि नीतियां: भारत के विभिन्न राज्यों में भूमि के स्वामित्व के बारे में नीतियां जो निर्धारित करती हैं कि कौन खेती करेगा या भूमि का उपयोग करेगा। यहां सरकार द्वारा तय की गई निजी संपत्ति के रूप में भूमि के रूपांतरण ने गैर-निजी वन भूमि क्षेत्रों को राज्य की संपत्ति के रूप में छोड़ दिया। इस नीति ने उन आदिवासी लोगों पर प्रतिकूल प्रभाव डाला जो जंगलों पर पारंपरिक अधिकार रखते थे जहां वे युगों से रह रहे थे।

कृषि मजदूर: सामाजिक श्रेणियां मुख्य रूप से अपनी श्रम शक्तियों को बेचने से आजीविका प्राप्त करती हैं।

द्विपक्षीय या बंधुत्व: वंश की व्यवस्था जिसमें एक बच्चे को पिता और माता दोनों के समान वंश के रूप में मान्यता दी जाती है।

ब्रेकीसेफेलिक: एंथ्रोपोमेट्रिक उपायों के संदर्भ में, 80 सेफेलिक इंडेक्स और अधिक की चौड़ाई वाले सिर को व्यापक या ब्रैचीसेफेलिक के रूप में वर्गीकृत किया गया है। 80 से कम नहीं, बल्कि 75 से कम के इंडेक्स वाले, जिन्हें 20सामाजिक संरचना ग्रामीण और शहरी को मीडियम हेड या मेसो-या मीसाती-सेफेलिक के रूप में वर्गीकृत किया गया है। लंबे या डोलिचो-सेफेलिक सिर वे सिर होते हैं, जिनका 75 से नीचे का सेफालिक इंडेक्स होता है।

ब्राह्मणवादी परंपराएँ: इन परंपराओं को अनुष्ठानों और विश्वासों के रूप में किसी भी जाति द्वारा पालन किया जा सकता है और वे अनुष्ठान हैं जो पुरोहित वर्ग को वर्चस्व प्रदान करते हैं और उन्हें जाति की सीढ़ी में विशिष्ट बनाते हैं।

पूंजीवाद: एक आर्थिक संगठन जिसमें संपत्ति का निजी स्वामित्व होता है, पूंजी पर नियंत्रण होता है, बाजार तंत्र और श्रमिकों के प्रावधान होते हैं और जिसका उद्देश्य अधिकतम लाभ कमाना होता है।

कोकेशियन: शारीरिक विशेषताओं के अनुसार मानव जाति की श्वेत जाति से संबंधित।

सेफेलिक इंडेक्स: सिर की चौड़ाई का उसकी लंबाई के अनुपात को प्रतिशत के रूप में व्यक्त किया जाता है और इसे सेफेलिक इंडेक्स कहा जाता है।

सामूहिक विवेक: एमिल दर्खाइम के अनुसार, सामूहिक विवेक समाज की औसत सदस्य के लिए आम धारणा और भावनाओं की समग्रता को संदर्भित करता है।

सहभोज : उन लोगों से संबंधित, जिन्हें पारंपरिक रूप से एक साथ खाने की अनुमति है वाणिज्यिक और औद्योगिक पूंजीपति : औद्योगिक प्रतिष्ठान और बड़े पैमाने पर व्यवसाय के मालिक।

सांप्रदायिकता: यह एक शब्द है जिसे समुदाय से लिया गया है, लेकिन यह सामूहिक रूप से एक प्रकार का प्रकोप है जहां कथित मतभेदों या हितों के टकराव के कारण एक समुदाय दूसरे के खिलाफ हो जाता है।

समरक्तता : रक्त संबंधों के आधार पर नातेदारी को पुनः प्राप्त करने का सिद्धांत।

कपर्सिनरी (संदायदता) : एक पितृसत्तात्मक समाज में परिवार के पुरुष सदस्यों के बीच संपत्ति का संयुक्त स्वामित्व।

कॉस्मोलॉजी : ब्रह्मांड का विज्ञान है।

सांस्कृतिक साम्राज्यवाद : यह मानकीकृत सांस्कृतिक और सभ्यतागत मूल्यों को तय करके कम विकसित राष्ट्र के ऊपर संस्कृति, अर्थव्यवस्था और प्रौद्योगिकी द्वारा निर्मित पहली दुनिया का आधिपत्य है।

द्वैध वंशानुक्रम : वंश की व्यवस्था जिसमें बच्चा या तो माता-पिता के समूह से जुड़ा होता है।

अनुभवजन्य : ज्ञान जो अवलोकन और प्रयोग पर आधारित है।

अंतर्विवाह प्रथा : एक ही जाति में विवाह की व्यवस्था का रूप ।

नृजातीयता : साझा संस्कृति, भाषा और क्षेत्र के साथ एक विशेष समूह से संबंधित अवस्था।

नृकेंद्रिक : इसका उपयोग इस दृष्टिकोण का वर्णन करने के लिए किया जाता है कि एक का समूह बेहतर है।

बहिर्जात : इस विशेषण का उपयोग उस वर्णन के लिए किया जाता है जो बाहरी कारणों से उत्पन्न होता है।

शोषण : जब गरीब और हाशिए के लोगों के पास जीवित रहने का कोई स्रोत नहीं है, तो वे खानों या विकास परियोजनाओं, खेतों आदि में भूमिहीन श्रम के रूप में काम करने के लिए मजबूर होते हैं, जहां उन्हें न्यूनतम वेतन या मजदूरी मिलती है।

फासीवाद : एक अधिनायकवादी शासन जहां एक प्रमुख शासक एक राष्ट्र ६ राज्य ६ देश पर शासन करता है जिसमें उसके हाथों में सभी शक्तियां होती हैं।

लिंग : पुरुषों और महिलाओं से जुड़े गुण जो सामाजिक रूप से निर्मित हैं, जैसे, पुरुष मजबूत हैं, महिलाएं कमजोर हैं आदि।

हरित क्रांति : उन्नत बीजों, उर्वरकों, कीटनाशकों और सिंचाई के संयोजन के माध्यम से खाद्य उत्पादन की त्वरित वृद्धि।

होमोफोबिया : समलैंगिक लोगों, सेक्स इच्छाओं या रिश्तों के खिलाफ घृणा या पूर्वाग्रह

बिचौलिये : राज्य और वास्तविक काश्तकारों के बीच सामाजिक श्रेणियां।

कच्चा भोजन : यह पानी में पकाया जाने वाला भोजन है

भूमि अलगाव : जब लोगों को वन भूमि के विशाल पथ का उपयोग करने से प्रतिबंधित कर दिया जाता है, जो कि वे जनजाति (जनजाति) सरकारी नीतियों के कारण युगों से इस्तेमाल कर रहेभूमि से वंचित हो जाते हैं। इसे भूमि अलगाव माना जाता है। जनजातियों के लोग भूमिहीन हो जाते हैं।

जमींदार : सम्पदा के मालिक जो पूर्व-ब्रिटिश काल में दूसरों को भूमि पट्टे पर देते थे।

मास मीडिया : आमतौर पर समाचार पत्रों, रेडियो और टेलीविजन के रूप में समझा जाता है, ये ऐसी तकनीकें हैं जो बड़े पैमाने पर दर्शकों के साथ-साथ एक व्यक्ति को भी पूरा करती

हैं। यह बड़ी संख्या में दर्शकों को सूचना, प्रभाव और संचार करने या संचारित करने के लिए है।

मातृवंशीय : महिला रेखा के वंश का पता लगाने के लिए एक सिद्धांत।

यांत्रिक एकता (Mechanical solidarity) : किसी समाज में एकता या एकरूपता की स्थिति एकरूपता या समानता के तत्वों पर आधारित हो सकती है। ऐसी स्थिति का वर्णन दर्खाइम ने यांत्रिक एकता के रूप में किया है।

भूमध्यसागरीय : भौतिक प्रकार से संबंधित कोकेशियन प्रजाति की विशेषता जो मध्यम या छोटे कद की होती है, पतला निर्माण, लंबे सिर के साथ 75 से कम सूचकांक और गहरे रंग वाले ।

आधुनिकता : आधुनिकता के मूल मूल्य स्वतंत्रता, आलोचनात्मक सोच, खोज, नए विचार और प्रयोग हैं जहां सब कुछ सत्यापित और परीक्षण किया जाना है।

मंगोलीय : उत्तरी और पूर्वी एशिया के लोगों सहित एशिया का एक प्रमुख नस्लीय स्टॉक। उदाहरण के लिए, मलेशियाई, चीनी, जापानी, एस्किमो और अक्सर अमेरिकी भारतीय भी इस नस्ल के हैं। भारत में, कई अन्य लोगों के अलावा उत्तर पूर्व में नागा जनजाति इस नस्ल के हैं।

आंदोलन : एक समाज में कुछ समूह के विकास, उत्थान की दिशा में कार्रवाई उन्मुख।

नेग्रिटो : अफ्रीकी लोग अश्वेत जाति से संबंधित हैं। भारत में दक्षिण भारतीय जनजातियों जैसे कादर, इरुला आदि को इस प्रजाति से संबंधित माना जाता है।

नॉर्डिक : उत्तरी यूरोप और विशेष रूप से स्कैंडिनेविया के जर्मनिक लोगों से संबंधित है। यह एक शारीरिक प्रकार है जिसकी विशेषता है लंबा कद, लंबा सिर, हल्की त्वचा और बाल, और नीली आँखें। भारत में, वे देश के विभिन्न हिस्सों जैसे पंजाब और राजपुताना में पाए जाते हैं।

जैविक एकता (Organic Solidarity) : एक समाज में एकता या एकरूपता की स्थिति सामाजिक-सांस्कृतिक विशेषताओं के अंतर से उत्पन्न हो सकती है। जैविक एकता के रूप में दर्खाइम द्वारा वर्णित इस तरह की एकता है ।

रुढ़िवादी : एक सिद्धांत जो स्वीकार किया जाता है और सच माना जाता है, विशेष रूप से धर्म में यह वही है जो आधिकारिक तौर पर निर्धारित है।

पक्का खाना : यह तेल में पकाया जाने वाला भोजन है

पंचायती राज : स्थानीय स्वशासन की प्रणाली है

पितृ पतिस्थानीक : यह शब्द पति के पिता के घर में विवाह के बाद, एक जोड़े के निवास को संदर्भित करता है।

पितृसत्तात्मक : जहाँ पिता परिवार में मुख्य अधिकार है।

पितृवंशिय : पुरुष रेखा यानि पिता के माध्यम से वंश का पता लगाने के लिए एक सिद्धांत।

कंगालीकरण : वह प्रक्रिया जिसके कारण आदिवासी लोग न केवल अपनी पारंपरिक आजीविका को ढीला करते हैं बल्कि वे गरीब और हाशिए पर चले जाते हैं।

किसान स्वामित्व : स्वतंत्रता के बाद उभरी भूमि में मालिकाना हक वाले किसान।

छोटे व्यापारी और दुकानदार : जनसंख्या छोटे व्यवसाय और व्यापार में लगी हुई है।

बहुदेववादी : एक से अधिक देवताओं की पूजा से संबंधित।

सांसारिक : एक सामाजिक व्यवस्था के तत्व जो धर्म या धार्मिक उद्देश्य से जुड़े नहीं हैं। दूसरे शब्दों में, साधारण जीवन से जुड़े हैं।

व्यावसायिक वर्ग : व्यावसायिक योग्यता, जैसे शिक्षा, प्रशिक्षण और कौशल से संबंधित व्यावसायिक श्रेणियां। शेयरक्रॉपर किरायेदारों, खेती करने वालों को शेयर के आधार पर भूमि की खेती करना।

धर्म प्रचार : एक धर्म से दूसरे धर्म में परिवर्तित होने के लिए प्रचार करना ।

प्रोटेस्टेंट एथिक : ईसाइयत का एक सिद्धांत जो पूंजीवाद की सांस्कृतिक सामग्री प्रदान करता है, जैसे कि व्यक्तिवाद की उपलब्धि प्रेरणा, विरासत में मिली संपत्ति और विलासिता। इसने काम और लाभ, जादू के विरोध और अंधविश्वास के खिलाफ और तर्कसंगत संज्ञा के प्रति प्रतिबद्धता पर जोर दिया।

प्रोटो-ऑस्ट्रलॉइड : एक नृजातीय समूह से संबंधित है जिसमें ऑस्ट्रेलियाई आदिवासी और दक्षिणी एशिया और प्रशांत द्वीप समूह के अन्य लोग शामिल हैं, जिनमें जापान का ऐनू भी शामिल है। भारत में, हो और भील नामक बिहार के छोटानागपुर जनजातियों को इस प्रजाति का माना जाता है।

पवित्रता और प्रदूषण : यह एक विचारधारा है जो एक व्यक्ति या वस्तु या रंग को पूरी तरह से शुद्ध (शुद्धता) और अन्य अनुष्ठान अशुद्ध और अशुद्ध (प्रदूषण) मानती है।

क्वीर : समलैंगिकता के संदर्भ में यह यौन अल्पसंख्यकों के लिए एक छत्र शब्द है जो विषमलैंगिक नहीं है और इनमें समान यौन इच्छाएं या रिश्ते हैं।

तर्कसंगत : इंद्रियों पर आधारित है और सिर्फ विश्वास पर नहीं। उसे अस्वीकार करना जो परक्षणीय न हो।

विमोचक परिवर्तन : वे परिवर्तन जो धार्मिक रूपांतरण जैसे समुदाय के पुनर्ग्रहण से जुड़े होते हैं।

सुधार आंदोलन : ये आंदोलन आंशिक बदलाव लाते हैं और ज्यादातर मूल्यों और मान्यताओं को प्रभावित करते हैं जबकि परिवर्तनकारी घने होते हैं और बड़े बदलाव लाते हैं।

विद्रोह : राजनीतिक व्यवस्था में बदलाव लाने के उद्देश्य से प्रतिरोध का एक कार्य।

क्रांतिकारी परिवर्तन : परिवर्तन जिसमें बहुत बड़ा सामाजिक संरचनात्मक परिवर्तन होता है और पुरानी संरचनाओं से एक पूरी नई पारी होती है।

क्रांतिकारी आंदोलन : ये वे हैं जो सामाजिक संरचना में कहीं अधिक मौलिक बदलाव लाते हैं।

क्रांतिकारी : राजनीतिक क्रांति की वकालत करने के लिए एक व्यक्ति की ओर से एक अधिनियम।

पवित्र : एक सामाजिक व्यवस्था के उन तत्वों को संदर्भित करता है जो धर्म से संबंधित हैं या देवता की पूजा के लिए अलग हैं अर्थात् देवी/देवता।

मोक्ष : पापों से आत्मा को बचाना और इसके परिणामस्वरूप स्वर्ग में प्रवेश प्राप्त करना।

संस्कृतिकरण : श्रीनिवास के अनुसार एक जटिल और विषम प्रक्रिया है जिसमें कई अवधारणाएं शामिल हैं। सामाजिक और सांस्कृतिक प्रक्रिया जहां निचली जातियां उच्च लोगों का अनुकरण करती हैं या उनके रीति-रिवाजों, अनुष्ठानों, भोजन और पोशाक का पालन करके पदानुक्रम में दो बार जन्में (द्विज) जाति, को संस्कृतिकरण कहा जाता है। यह

जाति समूहों की सामाजिक गतिशीलता को लाने के लिए एक सामाजिक प्रक्रिया है जहां निचली जातियां समाज में उच्च स्थिति प्राप्त करने के लिए उच्चतर तरीके अपनाती हैं।

धर्मनिरपेक्षता : यह फ्रांसीसी क्रांति के दौरान शुरू की गई एक विचारधारा है। राज्य के हिस्से पर एक राजनीतिक दर्शन के रूप में यह आवश्यक था कि राज्य राज्य नीति के रूप में किसी भी धर्म को लागू नहीं करेगा। हालांकि इसने अपने लोगों के किसी भी हिस्से के हिस्से पर किसी भी धर्म के व्यवहार को प्रतिबंधित नहीं किया।

लिंग : पुरुषों और महिलाओं के बीच जैविक अंतर ।

सामाजिक वर्ग : मुख्य रूप से आय, धन और संपत्ति के मामले में सामाजिक श्रेणियों को विभेदित और पदानुक्रमित रूप से स्थान दिया गया है।

सामाजिक बहिष्कार : जब किसी समुदाय को मौजूदा सामाजिक व्यवस्था से बाहर रखा जाता है या समाज में दूसरों के समान दर्जा प्राप्त नहीं होता है।

किरायेदारों : कुछ कार्यकाल में मालिकों से भूमि रखने वाले किसान।

जनजाति : साझा संस्कृति, भाषा, इतिहास और निश्चित क्षेत्र वाले लोगों का समूह।

द्विज : आम तौर पर ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य जैसे उच्च जातियों को, जिन्हें एक 'उपनयन समारोह' से गुजरना पड़ता था और वे पवित्र धागा पहनने वाले होते थे, जो उन्हें बुर्ज के रूप में ऊँचा दर्जा देते थे। इसका मतलब था कि एक व्यक्ति (पुरुष) का न केवल शारीरिक जन्म हुआ है बल्कि आध्यात्मिक जन्म भी हुआ है।

एकरेखीय : वंश की प्रणाली जिसमें पूर्वज के साथ संबंध केवल एक पंक्ति में पहचाने जाते हैं, अर्थात, पिता या माता में से कोई एक।

पश्चिमी ब्रेकीसेफलः इन्हें तीन प्रकारों में विभाजित किया गया है

i) अल्पेनॉयड को गोल सिर (सिर या खोपड़ी का पिछला हिस्सा) गोल नाक, मध्यम कद, गोल चेहरे के साथ व्यापक सिर की विशेषता है। त्वचा का रंग हल्का है, चेहरे और शरीर पर बाल प्रचुर मात्रा में हैं, शरीर मोटे तौर पर सेट है। यह किस्म गुजरात के बनिया, काठियावाड़ के काठी, बंगाल के कायस्थ आदि के बीच पाई जाती है।

ii) दार्शनिक लोगों के बीच, सिर गोल ओसीसीपिट और उच्च वॉल्ट के साथ चौड़ा है, नाक बहुत लंबी है, कद लंबा है, चेहरा लंबा है, माथा फूट रहा है, त्वचा का रंग गहरा होता है, आँखें और बाल भी काले होते हैं। इस प्रकार का प्रतिनिधित्व बंगाल, उड़ीसा और कूर्ग में किया जाता है। बंगाल के ब्राह्मण और मैसूर के कनारे ब्राह्मण भी कुछ प्रतिनिधि हैं।

iii) अर्मेनॉयड दार्शनिक जैसे अधिकांश पात्रों में है। पूर्व में, ओसिपुट का आकार अधिक चिह्नित है और नाक अधिक प्रमुख और संकीर्ण है। बॉम्बे की पारसी ठेठ आर्मेनॉयड विशेषताओं को दिखाती है।

पश्चिमीकरण : पश्चिमी जीवनशैली और मूल्यों को अपनाने की प्रक्रिया है, खासकर अंग्रेजों की ।

कामगार वर्ग : जो लोग उद्योगों में काम करते हैं।

जमींदार : संपत्ति के मालिक, भारत के कुछ क्षेत्रों में 1793 में स्थायी निपटान की शुरुआत के कारण बनाया गया था। हालाँकि, जमींदार शब्द का प्रयोग भारत के विभिन्न क्षेत्रों में अलग-अलग अर्थों में किया जाता है।